शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 15 अंक : 2 1 सितम्बर 2022

भाद्रपद-आश्विन मास, विक्रम संवत् 2079

संस्थापक
स्व. मुकुन्दराव कुलकर्णी

परामर्श
के.नरहरि
डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
जगदीश प्रसाद सिंघल
शिवानन्द सिन्दनकेरा
जी. लक्ष्मण

सम्पादक
डॉ. राजेन्द्र शर्मा

सह सम्पादक
डॉ. शिवशरण कौशिक
भरत शर्मा

संपादक मंडल
प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय
डॉ. ओमप्रकाश पारीक
डॉ. एस.पी. सिंह

प्रबन्ध सम्पादक
महेन्द्र कपूर

व्यवस्थापक
बजरंग प्रसाद मजेजी

प्रेषण प्रभारी : **नौरंग सहाय 'भारतीय'**

कार्यालय प्रभारी : **आलोक चतुर्वेदी**

प्रकाशकीय कार्यालय
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राजस्थान) 302001
दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष : 8920959986

E-mail :
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

वार्षिक शुल्क ₹ 250/-
दस वर्षीय शुल्क ₹ 2000/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है तथा चित्रों का प्रतीकात्मक प्रयोग किया गया है।

भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी

❑ प्रो. हरीश कुमार शर्मा

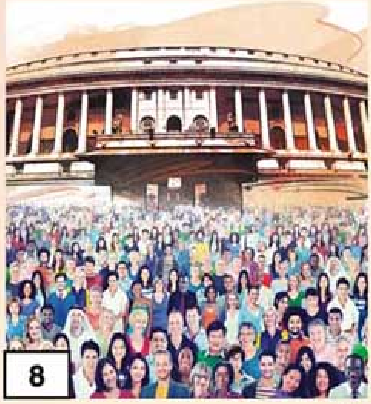

8

भाषाएँ मनुष्य को मनुष्य से जोड़ने के लिए बनी हैं। वे मनुष्यों को जोड़ें, इसी में उनकी सार्थकता और सफलता है। वे परस्पर कलह का कारण न बन पायें, इसके लिए सदैव सजग रहने की जरूरत है। फर्क सिर्फ समझ का है कि हम चीजों को कैसे लेते हैं। यदि उदार दृष्टि से सोचेंगे तो हमें हिंदी और अपनी भाषा में कोई विरोध नजर नहीं आएगा और हिंदी दिवस को हम हिंदी दिवस के साथ साथ अपनी-अपनी भाषाओं के दिवस के रूप में भी मना पायेंगे।

अनुक्रम

3.	सम्पादकीय	- डॉ. राजेन्द्र शर्मा
4.	राजभाषा हिंदी के बढ़ते चरण और संभावनाएँ	- प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय
10.	हिंदी की उपस्थिति : चुनौतियाँ एवं समाधान	- डॉ. आशीष सिसोदिया
13.	भारत में हिंदी भाषा की वर्तमान स्थिति	- डॉ. अरुण कुमार चतुर्वेदी
16.	हिंदी के विकास में अन्य भाषाओं का योगदान	- डॉ. शिव शरण कौशिक
18.	राष्ट्रीय से अंतरराष्ट्रीय संपर्क भाषा के रूप में....	- डॉ. सत्य प्रकाश पाल
20.	राष्ट्रीय और सांस्कृतिक एकता में सहायक हिंदी	- डॉ. नवीन नंदवाना
22.	आज के परिवेश में हिंदी	- डॉ. विवेकानन्द उपाध्याय
25.	हिंदी : भारत की अस्मिता और राष्ट्रीय एकता	- प्रो. आनन्द प्रकाश त्रिपाठी
28.	भारत की राष्ट्रीय और सांस्कृतिक एकता...	- डॉ. रेनू त्रिपाठी
31.	अरुणाचल प्रदेश की भाषाई बहुलता का सेतु ...	- डॉ. अरुण कुमार पाण्डेय
34.	हिंदी पत्र-पत्रिकाएँ एवं हिंदी चेतना की जागृति	- प्रो.आनंद प्रकाश त्रिपाठी 'रत्नेश'
40.	भारत की सांस्कृतिक एकता और हिंदी	- प्रो. प्रत्यूष दुबे
42.	हिंदी और उसकी बोलियों का यथार्थ	- रीना मिश्रा 'पल्ली'

तकनीक की भाषा बनकर सिरमौर बने

❑ प्रो. नरेन्द्र मिश्र

हिंदी भाषा की बोलियों ने इसे जहाँ एक तरफ समृद्ध किया, ताकत दी, वहीं दूसरी तरफ भारत की भाषाई एकता को भी मजबूत किया। अधिकांश भारत की मातृ भाषा और प्रथम भाषा होने से हिंदी सम्प्रेषणीय है, द्वितीय भाषा या इतर भाषा के द्वारा सम्प्रेषण एक चुनौतीपूर्ण एवं लम्बी प्रक्रिया है। इसीलिए 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति' में मातृ भाषा में ही शिक्षण पर बल दिया गया है, क्योंकि मातृ भाषा में बालमन पर बिम्ब निर्माण की प्रक्रिया सरल एवं सहज होगी। हिंदी यह कार्य सरलता से करती है। क्योंकि संस्कृत भाषा की धरोहर को तत्सम शब्दावली, सुभाषित, मुहावरे आदि के माध्यम से हिंदी बचाये हुए है।

37

संपादकीय

डॉ. राजेन्द्र शर्मा
सम्पादक

भारत भाषाई विविधता का संगम है। देश में हजारों भाषाएँ और बोलियाँ हैं जो पूरी जीवंतता के साथ हमारी रंग-बिरंगी सांस्कृतिक विविधता में रची-बसी हैं। प्रसिद्ध विद्वान मार्क ट्वेन तो बार-बार दोहराते हैं कि ''भारत मानव जाति का पालना है और मनुष्य की वाणी का जन्मस्थान है।'' पर इन भाषाओं में से 196 भाषाओं पर विलुप्त होने का खतरा मँडरा रहा है। इनके संरक्षण और संवर्धन हेतु अविलम्ब कारगर कदम उठाने की आवश्यकता है। यूनेस्को (UNESCO संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन) ने तो भाषाई एवं सांस्कृतिक विविधता को बचाने और विलुप्त हो रही भाषाओं को संरक्षित रखने के लिए 21 फरवरी को अंतरराष्ट्रीय मातृ भाषा दिवस के रूप में मनाना प्रारम्भ किया है।

वस्तुत: मातृ भाषा केवल संवाद का माध्यम ही नहीं होती अपितु हमारी सभ्यता और संस्कृति को प्रतिबिंबित भी करती है। हमारी आकांक्षाएँ, आशाएँ और आदर्श, अनुराग और विराग, मूल्य एवं मर्यादाएँ हमारा जीवन और साहित्य, सभी हमारी मातृ भाषाओं में ही अभिव्यक्ति पाते हैं। लेकिन स्वतन्त्रता के बाद सत्ता पर ऐसे लोगों का प्रभाव बढ़ता गया जो अंग्रेजियत के रंग में रंगे थे या जो विदेशों से अंग्रेजी में पढ़ कर आये थे। इन्होंने ऐसा भ्रमजाल बनाया कि सिर्फ अंग्रेजी ही देश की शिक्षा को आगे बढ़ा सकती है, अंग्रेजी नहीं रहेगी तो देश पिछड़ जाएगा, देश में विज्ञान और तकनीक का विकास नहीं हो पाएगा। इसका परिणाम यह रहा कि समय के साथ-साथ पूरे देश में पब्लिक स्कूलों एवं अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों का जाल फैलता चला गया। हालाँकि विभिन्न शिक्षा आयोगों एवं समितियों ने शिक्षा को अंग्रेजी के कहर से बचाने की समय-समय पर संस्तुतियाँ की परन्तु ये लागू नहीं हो पाईं।

पच्चीस माह पूर्व 29 जुलाई 2020 को घोषित राष्ट्रीय शिक्षा नीति में प्राथमिक तक की शिक्षा को मातृ भाषा, स्थानीय-भाषा या क्षेत्रीय भाषा में देने का प्रावधान कर सभी भारतीय भाषाओं के प्रति सम्मान व्यक्त किया गया है। नि:संदेह यह एक स्वागत योग्य पहल है। नेल्सन मंडेला तो कहा ही करते थे कि ''यदि आप किसी व्यक्ति से ऐसी भाषा में बात करते हैं, जो वह समझ सकता है तो वह उसके मस्तिष्क में घर करती है, लेकिन अगर उसकी अपनी भाषा में बात करते हैं तो वह सीधे उसके हृदय को छूती है।'' यह सर्वविदित है कि बच्चे अपनी घर की भाषा/मातृभाषा में बुनियादी अवधारणाओं को सरलता से और गहनता से समझ पाते हैं जबकि अंग्रेजी में उन्हें बार-बार रटना पड़ता है। शिक्षा नीति में यह अपेक्षा भी की गई है कि कक्षा-8 और उसके आगे की पढ़ाई भी मातृभाषा/स्थानीय भाषा/ क्षेत्रीय भाषा में करने के प्रयास होने चाहिए। इस नीति को जमीन पर उतारने का ही परिणाम है कि अब नीट परीक्षा तेरह भारतीय भाषाओं में हो रही है तथा अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (एआईसीटीई) ने 11 स्थानीय भाषाओं में बीटेक पाठ्यक्रमों को भी मान्यता प्रदान की है। हमारे देश में अंग्रेजी का प्रदर्शनकारी प्रभाव इतना ज्यादा व्यापक है कि हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं को कड़ा संघर्ष करना पड़ेगा; परन्तु सभी को विश्वास है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति से बदलाव आकर रहेगा और यह मील का पत्थर साबित होगी। लेकिन इसके साथ यह भी जरूरी है कि अभिभावक और आचार्य स्वयं को इस पूर्वाग्रह से मुक्त करें कि केवल अंग्रेजी माध्यम से ही अच्छी शिक्षा मिल सकती है और आगे बढ़ा जा सकता है।

और अब बात हिंदी की। हिंदी दुनिया में तीसरी सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है। करोड़ों भारतीयों के बीच संवाद का माध्यम हिंदी ही है। अब तो मीडिया प्लेटफॉर्म भी निरन्तर हिंदी भाषा को स्वीकार कर रहे हैं और बढ़ावा दे रहे हैं। प्रतिष्ठित बहुराष्ट्रीय निकाय भी हिंदी को स्थान दे रहे हैं। स्वतन्त्रता आंदोलन के दौरान हिंदी आंदोलन की भाषा थी। उपनिषद, पुराण, रामायण, महाभारत तथा विभिन्न राजवंशों के कथानकों को आधार बनाकर साहित्य का सृजन हुआ। इस साहित्य के माध्यम से न केवल भारतीय अतीत के स्वर्णिम होने और उसके खोये वैभव को पुन: प्राप्त करने का भाव स्थापित करने की कोशिश की गई अपितु लोगों में देश प्रेम, समाज-सुधार एवं अंग्रेजी सत्ता का विरोध करने का भाव जगाने का प्रयास हुआ। निराला की ''राम की शक्ति-पूजा'', मैथिलीशरण गुप्त का 'जयद्रथ-वध', 'भारत-भारती', प्रसाद की 'कामायनी' व अन्य कविताएँ - 'अरुण यह मधुमय देश हमारा', 'हिमालय के आंगन में', माखन लाल चतुर्वेदी की 'पुष्प की अभिलाषा', सुभद्रा कुमारी चौहान की कविता 'वीरों का कैसा हो बसंत' आदि रचनाएँ इसी श्रेणी की थी।

अंत में यह कहना प्रासंगिक ही है कि प्रांतीय भाषा और हिंदी एक दूसरे की विरोधी नहीं हैं बल्कि दोनों एक दूसरे की पूरक हैं। दोनों का लक्ष्य एक दूसरे की जगह लेना नहीं है। इनका लक्ष्य एक दूसरे के सहयोग से दोनों का विकास करना है। जिस तरह हमें अपने को महाराष्ट्र या मध्यप्रदेश या केरल या कर्नाटक का कहलवाने में गौरव होता है और उसके साथ ही भारत का कहलवाने में गौरव होता है; ठीक इसी तरह हमारा भाषाओं के नाम पर व्यवहार होना चाहिए। महात्मा गाँधी कहा करते थे कि यदि प्रांतीय भाषाएँ मजबूत नहीं होगी तो हिंदी भी मजबूत नहीं होगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में इसी भाव को दृढ़तापूर्वक रखा गया है। ❑

हिंदी को राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए जो प्रयास संविधान लागू होने के 15 वर्षों के भीतर होने चाहिए थे, वह नहीं हुआ। दक्षिण में विरोध के बाद आँखें खुली। दक्षिण में विरोध का कारण केवल हिंदी भाषा का उत्तर भारत का होना नहीं था। उनके मन का संशय भी था। सरकारी स्तर पर तीव्र गति से हिंदी में कार्यसाधक ज्ञान के लिए जो प्रशिक्षण होना चाहिए था वह नहीं कराया गया। उन्हें लगा कि पूर्ण रूप से हिंदी के लागू हो जाने से कार्यालयी स्तर पर वे लोग अक्षम और असमर्थ हो जाएंगे।

राजभाषा हिंदी के बढ़ते चरण और संभावनाएँ

प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय
अधिष्ठाता-कला संकाय,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर (राज.)

संविधान सभा ने 14 सितंबर 1949 को भारतीय संघ की राजभाषा के रूप में हिंदी को स्वीकार किया। आज भारत की राजभाषा हिंदी है। स्वतंत्रता आंदोलन के समय शिखर के स्वतंत्रता संग्राम सेनानी इसे राष्ट्रभाषा कहते थे। भारतीय संविधान में हिंदी और भारतीय भाषाओं को कई अनुच्छेद में बहुत अच्छी तरह से स्पष्ट किया गया है। अनुच्छेद 343 में कहा गया है - ''संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी।'' अनुच्छेद 343 के बाद 344, 345, 346, 347, 348, 349, 350 तथा 351 में राजभाषा के विकास, प्रादेशिक भाषाएँ, न्यायालयों की भाषा, आयोग का गठन आदि के लिए विस्तारपूर्वक प्रावधान है। अनुच्छेद 351 में हिंदी के विकास और स्वरूप के संबंध में बहुत ही महत्वपूर्ण बात कही गई है। इसमें कहा गया है कि ''संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका प्रयोग करे, ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्तानी और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं के प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक या वांछनीय हो वहाँ उसके शब्द-भंडार के लिए मुख्यत: संस्कृत से और गौणत: अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।'' संविधान लागू होने के पश्चात उक्त नियमों के अनुसार कार्रवाई की गई। राजभाषा के विकास की दिशा में सुनियोजित प्रयास हुए। विकास की गति धीमी रही। भारतीय संविधान ने हिंदी को राजभाषा बनाया। हिंदी ने अनेक क्षेत्रों में प्रगति की लेकिन राजभाषा की दृष्टि से पिछड़ी रही। हिंदी भाषी प्रदेशों में भी उच्च स्तर पर सरकारी कामकाज अंग्रेजी में ही होता रहा। आज भी हो रहा है। एक हिंदी भाषी क्षेत्र से दूसरे हिंदी भाषी क्षेत्र में पत्राचार की भाषा कुछ अपवादों को छोड़कर अंग्रेजी बनी हुई है। हिंदी भाषी क्षेत्र के विश्वविद्यालयों द्वारा भी दूसरे विश्वविद्यालयों को पत्र आज भी अंग्रेजी में लिखे जा रहे हैं। भारत सरकार के कार्यलयों द्वारा भी 'क' वर्ग के प्रांतों में अंग्रेजी में ही पत्र आते हैं। मूल पत्र का आज भी अंग्रेजी में प्रारूप तैयार करने के बाद अनूदित पत्र भेज दिए जाते हैं। अकादमिक परिषद्, सिंडिकेट, शोधपरिषद् तथा कार्यपरिषद् की कार्यसूची से लेकर कार्यवाही रपट तक प्राय: अंग्रेजी में ही लिखी जाती है। जहाँ पर समस्त सरकारी प्रक्रिया हिंदी में पूरी की जाती है वहाँ अनेक हिंदी भाषी हिंदी न जानने का ढोंग करते हुए अंग्रेजी में बोलने तथा लिखने की माँग करने लगते हैं। विश्वविद्यालयों में जब कोई पत्र या किसी प्रकार का प्रतिवेदन अंग्रेजी में आता है तो उसके हिंदी अनुवाद की जिम्मेदारी हिंदी शिक्षकों को दी जाती है। अंग्रेजी के शिक्षक न तो अंग्रेजी पत्रों का हिंदी अनुवाद करते हैं न ही हिंदी पत्रों का अंग्रेजी।

भारत सरकार के कार्यालयों, बैंकों तथा रेलवे जैसे अनेक विभागों में हिंदी अधिकारियों तथा अनुवादकों की नियुक्तियाँ हुई हैं। केंद्रीय विश्वविद्यालयों में हिंदी-प्रभाग के माध्यम से कार्य किया जा रहा है। सभी मंत्रालयों में हिंदी सलाहकार समितियाँ हैं। उनके द्वारा सुझाए गए विषयों को ध्यान में रखकर अनुपालन की प्रवृत्ति बढ़ी है।

संविधान के अनुच्छेद 343 (2) में प्रावधान है कि संविधान लागू होने के पंद्रह वर्ष बाद तक अंग्रेजी भाषा का प्रयोग सरकारी कामकाज हेतु होता रहेगा। इसके पश्चात सरकारी प्रयोजनों में अंग्रेजी को हटाकर हिंदी का ही प्रयोग किया जाना अपेक्षित था। 1956 में राजभाषा आयोग स्थापित किया गया। इस आयोग ने हिंदी के संबंध में अपनी विशेष रिपोर्ट प्रस्तुत की। इस रिपोर्ट के प्रकाश में आने के पश्चात दक्षिण भारत में हिंदी का विरोध प्रारंभ हो गया। दबाव के कारण सरकार ने 'राजभाषा अधिनियम 1963' पारित किया। इसके अनुसार संविधान के प्रारंभ से 15 वर्ष की कालावधि समाप्त होने के बाद भी संघ के उन सब राजकीय प्रयोजनों के लिए जिनके लिए वह (अंग्रेजी) उस दिन से ठीक पहले प्रयोग में लाई जाती थी, प्रयोग में लाई जाती रह सकेगी। इस अधिनियम के कारण अंग्रेजी की स्थिति सुदृढ़ हो गई। अंग्रेजी में कामकाज करने वालों को हिंदी सिखाना उपदेश और प्रेरणा का विषय बन गया। 14 सितंबर पुन: प्रासंगिक बनकर

उभर गया। हिंदी दिवस न केवल हिंदी अपितु भारतीय भाषाओं के लिए प्रेरणा दिवस के रूप में उभरकर आया। भारतीय भाषाओं की सुरक्षा और संरक्षण का भाव गहरा होता चला गया। भारतीय संविधान की 8वीं अनुसूची में संविधान लागू होते समय 14 भाषाएँ थीं। आज इनकी कुल संख्या 22 है। इनमें अधिकांश भाषाएँ अलग-अलग प्रांतों की हैं। संस्कृत, उर्दू, नेपाली तथा सिंधी के लिए कोई एक प्रदेश नहीं है। भाषाओं को 8वीं अनुसूची में जोड़ने के लिए भारत सरकार पर दबाव बढ़ा है। लगभग 95 भाषाएँ ऐसी हैं जो 8वीं अनुसूची से जुड़ना चाहती हैं। इसके सुपरिणाम चाहे जो भी हो, दुष्परिणाम दिखने लगे हैं। राजस्थानी की माँग वर्षों से बनी हुई है। राजस्थानी की 70 से अधिक बोलियाँ हैं। हिंदी में राजस्थान की चार प्रमुख बोलियों का पठन-पाठन होता है। इसमें ब्रजभाषा और हाड़ौती शामिल नहीं है।

भोजपुरी को 8वीं अनुसूची में शामिल करने की माँग जोर पकड़ रही है। राजस्थानी और भोजपुरी इन दोनों भाषाओं को बोलने वालों की संख्या 25 करोड़ के आसपास है। मैथिली के 8वीं अनुसूची में सम्मिलित होने के पश्चात भोजपुरी की माँग तीव्र हुई है। भोजपुरी क्षेत्र के ही प्रथम राष्ट्रपति महामहिम डॉ. राजेन्द्र प्रसाद थे। प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री तथा श्री चंद्रशेखर जी थे। ये तीनों राजनेता ठेठ भेजपुरी का प्रयोग करने वाले थे। हिंदी के आधुनिक साहित्य के अधिकांश बड़े साहित्यकार भोजपुरी भाषी ही थे और हैं। इन साहित्यकारों ने 8वीं अनुसूची के लिए कोई माँग नहीं उठाई। भोजपुरी में लिखा भी नहीं। कुछ लेखकों ने अवश्य लेखन कार्य भोजपुरी में भी किया है। भोजपुरी क्षेत्र के बड़े राजनेताओं के मन में हिंदी की चिंता रही होगी। इसीलिए उन लोगों ने भोजपुरी को 8वीं अनुसूची में शामिल नहीं किया होगा। इस समय भोजपुरी में बहुत बड़ी मात्रा में गुणात्मक लेखन हो रहा है। दूसरी तरफ मैथिली और भोजपुरी की खाई गहरी और चौड़ी होती जा रही है। कुछ लोगों ने अलग से मैथिल प्रदेश की माँग भी शुरू कर दी है। एक ही प्रदेश में 8वीं अनुसूची की कई भाषाएँ साथ-साथ नहीं चल सकती। इसका परिणाम प्रांतों के विभाजन के रूप में होने वाला है। पंडित मदन मोहन मालवीय और महात्मा गांधी जैसे हिंदी के पक्षधर नेता यह जानते थे कि अंग्रेजी के समानान्तर कोई भाषा खड़ी हो सकती है तो वह हिंदी ही है। हिंदी के विस्तार और प्रभाव का अर्थ अन्य भाषाओं की समृद्धि के साथ समझौता नहीं है। हिंदी भाषी प्रत्येक व्यक्ति की कोई न कोई अपनी बोली है जिसका प्रयोग वह अपने गाँव, घर और दैनंदिन उपयोग में करता है। पिछले लगभग 200 वर्षों में खड़ी बोली हिंदी ने अपनी बोलियों सहित प्रादेशिक भाषाओं से शब्द ग्रहण कर अपनी सामर्थ्य को अखिल भारतीय स्वरूप प्रदान किया है।

आज हिंदी किसी न किसी रूप में भारत के बाहर विश्व के 200 से अधिक विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जा रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा के रूप में हिंदी को स्वीकार्यता प्राप्त हुई है। सबसे पहले श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी में भाषण दिया था। वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने कई भाषण संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी में दिए। इस कारण हिंदी की वैश्विक स्वीकार्यता बढ़ी है और भारतीयों के मन में हिंदी को लेकर सकारात्मक ऊर्जा का संचार हुआ है। अब प्राय: सभी मंत्रालयों की बैठकें हिंदी में होती हैं। मंत्री स्वयं हिंदी में बैठकें लेते हैं। दक्षिण भारतीय मंत्रियों के संवाद भी आज हिंदी में सुने जा सकते हैं। लेकिन लेखन का कार्य अभी भी अंग्रेजी में हो रहा है।

हिंदी को राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए जो प्रयास संविधान लागू होने के 15 वर्षों के भीतर होने चाहिए थे, वह नहीं हुआ। दक्षिण में विरोध के बाद आँखें खुली। दक्षिण में विरोध का कारण केवल हिंदी भाषा का उत्तर भारत का होना नहीं था। उनके मन का संशय भी था। सरकारी स्तर पर तीव्र गति से हिंदी में कार्यसाधक ज्ञान के लिए जो प्रशिक्षण होना चाहिए था वह नहीं कराया गया। उन्हें लगा कि पूर्ण रूप से हिंदी के लागू हो जाने से कार्यालयी स्तर पर वे लोग अक्षम और असमर्थ हो जाएंगे। हिंदी क्षेत्र के विद्वान जनसंख्या के बल पर ऊँची बातें कर रहे थे या साहित्य के पठन-पाठन की चर्चा। कार्यालयी हिंदी की सर्वाधिक चिंता श्री मोटूरि सत्यनारायण को थी। वे महात्मा गांधी जी के अनुयायी थे। उनका जन्म 02 फरवरी 1902 ई. को आंध्रप्रदेश के कृष्णा जिले के दोण्डपाडु गाँव में हुआ था। 1921 ई. में वे हिंदी प्रचार के साथ जुड़े। हिंदी प्रचार के लिए मद्रास गए। 1938 से 1960 तक दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के प्रधान सचिव के रूप में कार्य किया। 1936 से 1938 ई. तक राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा के सचिव रहे। 1966 ई. तक दो बार राज्यसभा के मनोनीत सदस्य रहे। श्री मोटूरि सत्यनारायण हिंदी के महत्त्व के साथ ही प्रचार-प्रसार की दिशा और गति से भी सुपरिचित थे। केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल की स्थापना हुई तो वे 1960 से 1962 तक तथा पुन: 1971 से 1979 तक उसके अध्यक्ष रहे। केंद्रीय हिंदी संस्थान की स्थापना कर हिंदी के विकास की दिशा में उन्होंने बहुत बड़ा योगदान किया।

दक्षिण भारत में हिंदी के विरोध को उन्होंने नजदीक से देखा और महसूस किया कि सामान्यजन के साथ ही सरकारी कर्मचारियों और अधिकारियों के लिए प्रयोजनमूलक हिंदी आवश्यक है। इस संदर्भ में मोटूरि सत्यनारायण ने जो किया वह किसी भी हिंदी भाषी विद्वान ने नहीं किया। हिंदी भाषियों को इस प्रकार की तकनीक सूझी भी नहीं। पंडित मदनमोहन मालवीय, महात्मा गाँधी और राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन ने स्वतंत्रतापूर्व हिंदी की जो अलख जगाई उसे व्यावहारिक धरातल पर स्थापित करने के लिए संविधान सभा से लेकर जीवन पर्यन्त प्रयास

सत्यनारायण जी ने किया। इसकी चर्चा इसलिए भी आवश्यक है कि हिंदी सप्ताह, हिंदी पखवाड़े और हिंदी मास में मोटूरि सत्यनारायण को याद नहीं किया जाता है। 27-28 अप्रैल 1974 को केंद्रीय हिंदी संस्थान के दिल्ली केंद्र पर प्रयोजन मूलक हिंदी से परिचित करवाने के लिए एक दो दिवसीय संगोष्ठी की गई। तत्पश्चात् कार्यशाला का आयोजन किया गया। इसके पश्चात् संपादित रूप में केंद्रीय हिंदी संस्थान से अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुईं। मोटूरि सत्यनारायण जी के नेतृत्व में केंद्रीय हिंदी संस्थान की स्थापना केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल के अंतर्गत अनुच्छेद 351 को ध्यान में रखकर की गई। स्वतंत्रता के 75 वर्ष बाद भी केवल एक संस्था के ऊपर अनुच्छेद 351 के अनुसार कार्य करने की बड़ी जिम्मेदारी है। जबकि इस अनुच्छेद में हिंदी और भारतीय संघ से अत्याधिक अपेक्षाएँ हैं।

अनेक अवसरों पर इस बात का उल्लेख किया जाता है कि हिंदी भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बने। आठवीं अनुसूची में विर्निदिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शब्द और पदों को आत्मसात करे। शब्द भंडार मुख्यत: संस्कृत से और गौणत: अन्य भाषाओं से ग्रहण कर हिंदी की समृद्धि को सुनिश्चित करे। प्रश्न यह है कि इस पर कार्य किस प्रकार किया जाए। आठवीं अनुसूची के अनुरूप हिंदी में समृद्ध कोशों का अभाव है। हिंदी में अध्येता कोश नहीं है। समानान्तर कोश बहुत बाद में बनकर आए हैं। उनकी संख्या भी कम है। अंग्रेजी के किसी विशेष शब्द के पर्यायवाची के रूप में हिंदी तथा भारतीय भाषाओं से शब्दों का चयन कोश से ही होगा। लगभग 1800 प्रचलित बोलियों के साथ हिंदी के समस्त कोश तथा अध्येता कोश होना चाहिए। किसी भी भाषा को सक्षम, सक्रिय तथा अंततोगत्वा जीवित बनाए रखने के लिए उस भाषा-भाषी की उसके प्रति सम्पृक्ति और भाषा प्रयोग के साथ ही अकादमिक स्तर पर कुछ सहायक पुस्तकें चाहिए। प्रत्येक भाषा के पास व्याकरण, कोश तथा उसके लोक साहित्य के संग्रह की कम से कम एक पुस्तक आवश्यक है। व्याकरण के रूप बदलते रहते हैं। फिर भी यह पुस्तक सुदृढ़ आधार देती है। कोश के बिना विस्मृति का भय बना ही रहता है। लोक साहित्य का संरक्षण संस्कृति के बोध के साथ ही जनजीवन में प्रचलित शब्दावली का संरक्षण है। प्रबल भावों की अनुभूति की शब्दावली का वाक्य संयोजन है। केंद्रीय हिंदी संस्थान में इसकी योजना बनाई गई थी। अध्येता कोश तथा लोक साहित्य संरक्षण पर कार्य 2015 के पहले प्रारंभ हुआ था। परिणाम तक कार्य नहीं पहुँच रहा था। व्याकरण की योजना पहले भी नहीं थी, अभी भी नहीं है। लम्बे समय तक अरुणाचल प्रदेश के केंद्रीय विश्वविद्यालय ईटानगर में रीडर, अध्यक्ष तथा प्रोफेसर और प्रोफेसर अध्यक्ष रहते हुए मैंने जो महसूस किया था उसे क्रिया रूप देने का अवसर 2015 के अंत में प्राप्त हुआ। 51 भाषाओं के अध्येता कोश मैंने निदेशक के रूप में तैयार करवाए। मेरे प्रधान संपादकत्व में केंद्रीय हिंदी संस्थान से 51 अध्येता कोश, दो त्रिभाषा कोश प्रकाशित हैं। मेरे संपादन में तीन विश्वकोश-गणित, विज्ञान और भूगोल भी प्रकाशित हुए हैं। चार अभी भी प्रकाशनाधीन हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 मातृभाषा में शिक्षण की बात करती है। यह तभी संभव है जब प्रत्येक भाषा के पास समृद्ध कोश हो। भारत की अनेक जनजातीय भाषाओं के लिए लिपि नहीं है। उन्हें सर्वाधिक समृद्ध देवनागरी लिपि अपनानी चाहिए। यह आग्रह भाषाविदों का भी है। नई लिपि बनाने से उस भाषा के प्रचार-प्रसार की गति धीमी होगी तथा पाठकों को अनेक लिपियाँ सीखनी पड़ेगी। संस्कृत निष्ठ हिंदी को लेकर भी अनेक व्यक्तियों को आपत्ति होती है। भारत के भाषिक संदर्भ में विचार करें तो पायेंगे कि अनेक प्रांतों की भाषाएँ संस्कृतनिष्ठ ही हैं। अतिसंस्कृत निष्ठता से बचना चाहिए। मानक शब्दावली के निर्माण में संस्कृत से अधिक उपयोगी कोई अन्य भाषा नहीं है। संस्कृत से दुराव का दुराग्रह ठीक नहीं है। स्वतंत्रता के कुछ वर्ष बाद ही संस्कृत शब्दावली के विरोध के शब्द उठने लगे थे। समस्या यह थी और है कि संस्कृत के बिना सटीक अभिव्यक्ति के शब्द आसानी से प्राप्त नहीं होते। डॉ. सेठ गोविन्ददास ने हिंदी प्रचार-प्रसार में बाधा का मुख्य कारण प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू को माना है। उन्होंने 'हमें हिंदी के लिए क्या करना चाहिए' लेख में लिखा है कि ''हिंदी पर उसके राजभाषा स्वीकृत होने के पश्चात् भी, जो निरंतर संकट आते रहे, उसका सबसे पहला कारण हमारे प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू की हिंदी के संबंध में अनधिकार चेष्टाएँ थीं।'' इस लेख के प्रारंभ में डॉ. सेठ गोविन्द ने लिखा है, ''स्वतंत्र भारत के संविधान में हिंदी राजभाषा स्वीकृत होने के पश्चात् हमें आशा थी कि अब हिंदी पर कोई संकट नहीं आएगा; परंतु हमने एक गलती की, वह थी - पंद्रह वर्षों में हिंदी अंग्रेजी का स्थान ले लेगी - इसकी स्वीकृति। यदि हम इसके स्थान पर यह निर्णय लेते कि संविधान के लागू होते ही हमारा सारा राज-काज हिंदी में चलेगा, चाहे वह बहुमत से ही क्यों न हो और इसके लिए उस समय संविधान-सभा में बहुमत मौजूद था- तो हिंदी पर इस प्रकार के संकट न आते।''

किसी भी भाषा की समृद्धि के लिए केवल उसका गंभीर और बहुविध साहित्य ही आवश्यक तत्त्व नहीं है। समृद्ध भाषाएँ ज्ञान-विज्ञान तथा प्रशासनिक दृष्टि से भी संपन्न होती हैं। हिंदी को भी ज्ञान-विज्ञान की दृष्टि से संपन्न बनाने के लिए अनेक प्रयत्न राजकीय तथा व्यक्तिगत धरातल पर किए गए। केंद्रीय हिंदी निदेशालय हिंदी प्रचार-प्रसार की संस्थाओं को अनुदान तो देता ही है कोशों का प्रकाशन भी करता है।

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग ने विगत 60 वर्षों में लगभग 100 विषयों की मूलभूत शब्दावली को तैयार किया है। उन कोशों की शब्दावली के आधार पर अनेक भाषाओं में पाठ्यपुस्तकें लिखी गई हैं। आयोग ने अनेक विषयों की द्विभाषी और त्रिभाषी शब्दावलियाँ तैयार कर प्रकाशित की है। भौतिक, आयुर्विज्ञान, अंतरिक्ष विज्ञान, भू-विज्ञान, भूगोल, रसायन विज्ञान, जैव प्रौद्योगिकी, कृषि विज्ञान, पर्यटन, वाणिज्य, अर्थशास्त्र, इतिहास, गृह विज्ञान, मनोविज्ञान, गणित, जनसंचार, दूरसंचार, इलेक्ट्रानिक्स आदि की मूलभूत शब्दावली के आधार पर उच्च शिक्षा के लिए मानक पुस्तकें लिखी जा सकती हैं। कई लेखक लिख भी रहे हैं। संविधान की 8वीं अनुसूची में सम्मिलित सभी भाषाओं की प्रशासनिक शब्दावली अंग्रेजी के साथ उपलब्ध है। अंग्रेजी-हिंदी तथा हिंदी-अंग्रेजी प्रशासनिक शब्दावली बहुत लोकप्रिय है। इसके अतिरिक्त अनेक विषयों के परिभाषा कोश मानक रूप में उपलब्ध हैं। भारतीय भाषाओं में उच्च स्तर पर पाठ्यपुस्तक निर्माण के लिए सामग्री का अभाव नहीं है। हमारी मानसिकता अंग्रेजी के झुकाव की ओर है। भाषा की प्रतिष्ठा के लिए अनेक विषयों तथा क्षेत्रों में कार्य किया जाना चाहिए। यह केवल हिंदी के लिए नहीं अपितु सभी भारतीय भाषाओं के लिए है। कई भाषाएँ 8वीं अनुसूची में शामिल तो हुईं लेकिन उस भाषा में विद्यालयी शिक्षा भी नहीं दी जाती है। उनकी अकादमियाँ कुछ पुस्तकों का प्रकाशन करती हैं और पुरस्कार देती हैं। आचार्य क्षितिमोहन सेन ने 'भाषा की एकता' शीर्षक निबंध में लिखा है, ''भाषा को केवल भाषा मानकर हम चुप नहीं रह सकते। हमें उसे संस्कृतियों, विद्याओं और कलाओं का महान संगम तीर्थ बना देना होगा। अंग्रेजी भाषा की महिमा इसलिए नहीं है कि वह हमारे मालिकों की भाषा थी, बल्कि इसलिए कि उसने संसार की समस्त विद्याओं को आत्मसात् किया है। अंग्रेज चले गए हैं फिर भी अंग्रेजी का आदर ऐसा ही बना रहेगा। हिंदी को भी यही होना है। उसे भी नाना संस्कृतियों, विद्याओं और कलाओं की त्रिवेणी बनाना होगा। बिना ऐसा बने, भाषा की साधना अधूरी रह जाएगी।''

भारतीय भाषाओं के संदर्भ में विचार करने पर हम पाते हैं कि अपने देश की भाषाओं में संस्कृत को छोड़कर किसी ने भी समस्त विद्याओं को आत्मसात नहीं किया है। संस्कृत भी कालान्तर में मात्र साहित्य की भाषा बनकर रह गई। वह अद्यतन ज्ञान-विज्ञान से युक्त नहीं हो पाई। हिंदी के विकास की बात को भारतीय भाषाओं के पिछड़ेपन के साथ जोड़कर नहीं देखा जाना चाहिए। देश की अधिकांश भाषाएँ संस्कृत से होते हुए विभिन्न अपभ्रंशों से विकसित हुई हैं। आज जिन्हें द्रविड़ परिवार की भाषाएँ कहते हैं उनमें संस्कृत की शब्दावली हिंदी क्षेत्र की भाषाओं से अधिक ही है। जनजातीय भाषाएँ पड़ोसी भाषाओं की शब्दावली से समृद्ध हुई हैं। भारतीय भाषाएँ सहजीविता से आगे बढ़ी हैं। एक-दूसरे का पोषण करती हैं। इसीलिए विश्व की कुल भाषाओं का 25 प्रतिशत भारत में जीवित रूप में है। एक-दूसरे को मारने या निगल जाने की प्रवृत्ति अंग्रेजी की तरह भारतीय भाषाओं में नहीं है। जैसे भारतीय मूल की कई फसलें एक साथ एक ही खेत में समान पानी और खाद से समान मौसम में फूलती-फलती हैं, वैसे ही भारतीय भाषाएँ एक साथ पल्लवित-पुष्पित होती हैं। भारत की संस्कृति एक-दूसरे को सम्मान देने की है। यह भाषाओं के संदर्भ में भी है।

भारतीय भाषाओं को आपसी संघर्ष की आवश्यकता नहीं है। सभी भाषाएँ राष्ट्रभाषाएँ हैं। हिंदी को अंग्रेजी के समानान्तर खड़ा करना है। इसको बोलने वालों की संख्या, इसमें लिखित साहित्यिक पुस्तकें तथा ज्ञान-विज्ञान के ग्रंथ अब ऐसी स्थिति में आ गए हैं कि यह विदेशी भाषा के समकक्ष खड़ी हो सकती है। हिंदी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों की संख्या करोड़ों में है। भारत के बाहर अनेक देशों में हिंदी प्रभावी स्थिति में है। हिंदी भाषियों ने अपनी बोलियों के संघर्ष को पिछले सौ वर्षों से किनारे कर रखा है। विवाद की स्थिति में आने पर लाभ अंग्रेजी का होगा जैसा कि 1965 में हुआ। डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल ने हिंदी और दक्षिण भारतीय भाषाओं के संघर्ष के समय अत्यंत सुचिंतित लेख 'हिंदी के प्रति' शीर्षक से लिखा था। उन्होंने लिखा कि, ''अंग्रेजी वाले जो चाहते थे वही हो गया। भारतीय भाषाओं के आपसी मोरचे में अंग्रेजी की बन आई। और अब यह निश्चय हो गया कि सन् 65 के बाद भी अंग्रेजी ही राजभाषा बनी रहेगी। भारतीय भाषाएँ मतिभ्रम में पड़ गयीं और उन्हें घर में घुसे हुए असली शत्रु का पता ही न लगा। यह कुछ उस तरह की बात हुई जैसे 18वीं शती में आपस में लड़ते हुए देशी रजवाड़े अँग्रेजी राज्य के बढ़ते हुए चंगुल में बेसुध हो गए थे।''

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भाषाई एकता और उसकी शक्ति को पहचाना गया है। कोई भी विदेशी भाषा छह महीने से एक वर्ष के भीतर सीखी जा सकती है। उसके लिए माध्यम भाषा बनाने की आवश्यकता नहीं है। भारतीय भाषाएँ ही ज्ञान-विज्ञान के समस्त क्षेत्रों में माध्यम भाषा बने, इसके लिए प्रयास और तैयारी आवश्यक है। इससे भी अधिक आवश्यक है भाषिक स्वाभिमान की। समस्त प्रकार की कुंठाओं से परे जाकर काम करने की सभी भारतीय भाषाओं के प्रति सम्मान के भाव की। वर्तमान में अच्छी बात यह है कि भारत के माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी और गृहमंत्री श्री अमित शाह जी हिंदी सहित भारतीय भाषाओं की प्रतिष्ठा के लिए वाणी और कर्म के साथ सक्रिय हैं। वह दिन बहुत नजदीक है जब हिंदी सहित भारतीय भाषाएँ अपनी पूरी सामर्थ्य के साथ खड़ी होकर भारत के प्रशस्त ललाट को और अधिक दीप्तिमान करेंगी। ❑

भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी

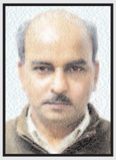

प्रो. हरीश कुमार शर्मा
हिन्दी विभागाध्यक्ष,
सिद्धार्थ विश्वविद्यालय,
कपिलवस्तु,
सिद्धार्थनगर (उ.प्र.)

सितंबर माह पुनः एक बार आ गया। सितंबर माह, मतलब हिंदी माह! भारत में यह महीना हिंदी के महीने के रूप में स्वीकृत है। 14 सितंबर को हिंदी दिवस के उपलक्ष्य में हर साल सितंबर माह में हिंदी दिवस, हिंदी सप्ताह, हिंदी पखवाड़ा तथा हिंदी माह देश भर में मनाए जाते हैं। कहीं यह कार्यक्रम पूरे मन से किए जाते हैं तो कहीं सरकारी दबाव के चलते रस्म अदायगी या परंपरा-निर्वाह के रूप में। एक वर्ग ऐसा भी है देश में हिंदी प्रेमियों का ही, जो इसे नकारता है और इसकी उपयोगिता पर प्रश्नचिन्ह खड़ा करता है कि हिंदी दिवस एक दिन ही क्यों? उन लोगों की चिंताएँ भी अपनी जगह वाजिब हो सकती हैं, पर बात असल में यह है कि मनुष्य का स्वभाव उत्सवधर्मी है। अच्छे-बुरे अवसरों को वह उत्सव का रूप देकर सहजता से व्यतीत करता है। कितने ही उत्सव विभिन्न देशों और जातियों से जुड़े हैं, जो उनके जीवन के व्यतीत सुखद-दुखद अवसरों की स्मृतियों के रूप में मनाए जाते हैं। हिंदी दिवस में लोग दोनों पक्ष देखते हैं। राजभाषा के रूप में 14 सितंबर को संविधान में उसे स्थान मिलने की प्रसन्नता के रूप में बहुसंख्या में हिंदी-प्रेमी मनाते हैं तो बहुत से लोग उसको अभी भी भारत की राजभाषा के रूप में समुचित प्रतिष्ठा न मिल पाने से निराश होकर अपनी खीझ व्यक्त करते हैं। कहना यह है कि दीर्घकाल तक चलते रहने से भले हमारे उत्सव हमारे लिए एक परंपरा निर्वाह भर बन कर रह जाते हैं, पर वास्तव में उनके पीछे का मूल भाव अच्छे से जुड़ने और बुरे से बचने तथा सत्कार्यों के संकल्प की प्रेरणा के ही रूप में होता है। हिंदी दिवस की सार्थकता भी इसी में है कि वह हमारे लिए मात्र एक दिन, एक सप्ताह, एक पखवाड़े या एक माह भर का उत्सव बनकर न रह जाए। अपितु, वह अब तक हमारे द्वारा अपनी भाषाओं के प्रति प्राप्त की गई उपलब्धियों की समीक्षा करने और भविष्य के विकास की योजनाएँ बनाने तथा उसके लिए प्रतिबद्धता व्यक्त करने का दिन बने।

कई विद्वान ऐसे हैं देश में, जो हिंदी दिवस को भारतीय भाषा-दिवस के रूप में मनाने पर जोर देते हैं। बात उनकी एकदम सही है। हिंदी दिवस को भारतीय भाषा दिवस कहा जाये या न कहा जाये, पर इसमें यह मूल भावना सम्मिलित अवश्य है और इसको इसी रूप में देखा, समझा तथा अपनाया जाना चाहिए। इस संदर्भ में यदि देखा जाए तो 'हिंदी शब्द दो तरह का अर्थ देता है। एक तो उस भाषा के अर्थ में, जिसे संविधान की राजभाषा का दर्जा दिया गया है और जिसमें हिंदी भाषी कहे जाने वाले 10 राज्यों की अनेकानेक भाषाएँ सम्मिलित हैं। यह हिंदी किसी एक राज्य की भाषा नहीं है, अपितु प्रमुखतः दस राज्यों में तथा सामान्यतः समस्त देश-

विदेश में प्रचलित भाषा का मानक रूप है। दूसरा इसका अर्थ व्यापक है। इसमें भारत भर की या कहें हिंदुस्तान की, समस्त भाषाएँ-बोलियाँ समाहित हो जाती हैं।

संदर्भानुसार इसका अर्थ होगा- हिंदी अर्थात् हिंद की भाषाएँ। इसके लिए और स्पष्ट करना हो तो इकबाल के 'सारे जहाँ से अच्छा हिंदोस्तां हमारा' की उस पंक्ति को याद कर लीजिए 'हिंदी हैं हम, वतन है हिंदोस्तां हमारा'। यहाँ नागरिकता के अर्थ में बात हो रही है और हमारा अभिप्राय यहाँ हिंदुस्तान की सभी (हिन्दी) भाषाओं-उपभाषाओं से है, जो हिन्द की हैं। कहने का अभिप्राय यह कि सामान्य प्रचलित अर्थ में हिन्दी एक भाषा का नाम है, जिसमें अनेकानेक बोलियाँ समाहित हैं, परन्तु व्यापक एवं विशिष्ट अर्थ में उसमें सभी भारतीय भाषाओं का अन्तर्भाव हो जाता है। इस तरह से हिंदी दिवस में भारतीय भाषा दिवस का भाव स्वतः समाहित हो जाता है। यही कारण है कि देश में अलग-अलग उड़िया दिवस, मराठी दिवस, तमिल दिवस, बांग्ला दिवस, असमिया दिवस आदि नहीं मनाए जाते। यह हिंदी भाषा-भाषियों को भी समझने की जरूरत है और हिंदीतर-भाषी लोगों को भी कि हिंदी दिवस मात्र एक भाषा से जुड़ा हुआ नहीं है, अपितु समस्त भारतीय भाषाओं से जुड़ा हुआ है और तदनुरूप ही हमें अपना कार्य-व्यवहार करना चाहिए। असल बात तो यह है कि जिस दिन संविधान में हिंदी को भारत की राजभाषा बनाने का निर्णय हुआ, उसी दिन अन्य 14 भारतीय भाषाओं को भी संविधान में राष्ट्रीय भाषाओं की मान्यता दी गई, जिनकी संख्या बढ़ते-बढ़ते अब 22 तक जा पहुँची है। संविधान की आठवीं अनुसूची में दर्ज होने के लिए कुछ सुनिश्चित प्रक्रिया एवं मानदंड निर्धारित हैं, इस कारण से कुछ ही भाषाओं को उसमें स्थान मिल पाया है। परंतु, इसका अभिप्राय यह कदापि नहीं है कि जो भाषाएँ या बोलियाँ अष्टम अनुसूची में सम्मिलित नहीं हैं, उनका महत्त्व कुछ कम है। वे भी हम भारतीयों से उसी सम्मान की हकदार हैं और उनका महत्त्व इस कारण से कुछ कम नहीं समझना चाहिए।

भाषाएँ मनुष्य को मनुष्य से जोड़ने के लिए बनी हैं। वे मनुष्यों को जोड़ें, इसी में उनकी सार्थकता और सफलता है। वे परस्पर कलह का कारण न बन पायें, इसके लिए सदैव सजग रहने की जरूरत है। फर्क सिर्फ समझ का है कि हम चीजों को कैसे लेते हैं। यदि उदार दृष्टि से सोचेंगे तो हमें हिंदी और अपनी भाषा में कोई विरोध नजर नहीं आएगा और हिंदी दिवस को हम हिंदी दिवस के साथ साथ अपनी-अपनी भाषाओं के दिवस के रूप में भी मना पायेंगे।

यहाँ पर एक बात और समझने की है। अपनी भाषा के प्रति प्रेम हमेशा दूसरी भाषा के विरोध की कीमत पर ही नहीं आता है, वैसे ही जैसे हिंदी-हित की बात करना या हिंदी के प्रति प्रेम रखने के लिए अंग्रेजी का विरोध जरूरी नहीं है। भारत में अंग्रेजी का विरोध उसके राजभाषा के रूप में चलन के लिए है, देश में इतनी समृद्ध भाषाओं के रहते हुए भी देशवासियों को उसकी अनिवार्यता बना दिये जाने को लेकर है और यह किसी भी स्वाभिमानी देश में होगा। एक भाषा के रूप में उससे कोई विरोध नहीं है। और, हिंदी एवं भारतीय भाषाओं में तो विरोध का कोई कारण हो ही नहीं सकता; क्योंकि हिंदी अपनाने, कार्य-व्यवहार में लाने का मतलब अपनी भाषाओं को छोड़ने या उनका तिरस्कार करने से नहीं है, अपितु उनके व्यवहार के साथ-साथ यथा-आवश्यक प्रयोग करने से है। और यह बहुत सहजता से संभव है। समाजीकरण की प्रक्रिया में बच्चा सबसे पहले अपने परिवार के प्रति प्रेम करना सीखता है। उसे सीधे समाज-प्रेम और राष्ट्र-प्रेम नहीं सिखा दिया जाता और बाद में जब वह राष्ट्र-प्रेम की भावना से संपन्न होता है, तो उसका परिवार एवं अपने समाज के प्रति लगाव कम नहीं हो जाता। यही स्थिति हिंदी एवं अन्य मातृभाषाओं के साथ है। जो अपने गाँव को प्रेम करना नहीं जानता, वह राष्ट्र-प्रेम को क्या समझेगा? जिसको अपनी मातृभाषा से लगाव नहीं होगा वह राजभाषा-राष्ट्रभाषा से क्या लगाव रखेगा! इसीलिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में मातृभाषाओं को इतना महत्त्व दिया गया है। मातृभाषा-प्रेम राष्ट्रभाषा-प्रेम की सीढ़ी है।

जितना गहरा यह लगाव होगा, उतना ही गहरा लगाव राष्ट्रभाषा से महसूस किया जा सकेगा। अतः मातृभाषा एवं राजभाषा में परस्पर विरोध नहीं है, पूरकता है। इसी बात को समझने की आवश्यकता है।

भाषाएँ मनुष्य को मनुष्य से जोड़ने के लिए बनी हैं। वे मनुष्यों को जोड़ें, इसी में उनकी सार्थकता और सफलता है। वे परस्पर कलह का कारण न बन पायें, इसके लिए सदैव सजग रहने की जरूरत है। फर्क सिर्फ समझ का है कि हम चीजों को कैसे लेते हैं। यदि उदार दृष्टि से सोचेंगे तो हमें हिंदी और अपनी भाषा में कोई विरोध नजर नहीं आएगा और हिंदी दिवस को हम हिंदी दिवस के साथ साथ अपनी-अपनी भाषाओं के दिवस के रूप में भी मना पायेंगे। संकुचित ढंग से सोचेंगे तो 'मेरा-तेरा' लगेगा। सोच को थोड़ा उदार कर लेने पर सब हमारा लगेगा। तब न हिंदीतर-भाषियों को हिंदी गैर लगेगी और न हिंदी-भाषियों को अन्य भारतीय भाषाएँ। ❑

हिंदी की उपस्थिति : चुनौतियाँ एवं समाधान

डॉ. आशीष सिसोदिया

सह आचार्य,
हिंदी विभाग मोहनलाल
सुखाड़िया विश्वविद्यालय,
उदयपुर (राज.)

महात्मा गाँधीजी ने कहा था कि 'जिस राष्ट्र की अपनी कोई राष्ट्रभाषा नहीं होती, वह राष्ट्र गूंगा होता है। राष्ट्रभाषा के इस परिप्रेक्ष्य में भारत गूंगा है। हिंदी भारत के 70 प्रतिशत लोगों द्वारा बोली जाती है। 1917 में महात्मा गाँधी ने गुजरात शिक्षा सम्मेलन के सभापति के रूप में कहा था कि किसी देश की राष्ट्रभाषा वही भाषा हो सकती है, जो वहाँ की अधिकांश जनता बोलती हो। वह सांस्कृतिक, राजनैतिक और आर्थिक क्षेत्र में माध्यम भाषा बनने की शक्ति रखती हो। वह सरकारी कर्मचारियों एवं सरकारी कामकाज के लिए सुगम तथा सरल हो। जिसे सुगमता और सहजता से सीखा जा सकता है। बहुभाषी भारत में केवल हिंदी ही एक भाषा है, जिसमें ये सभी गुण पाए जाते हैं।

14 सितम्बर 1949 को भारतीय संविधान ने हिंदी को राजभाषा के रूप में स्वीकार किया किंतु राष्ट्रभाषा के रूप में नहीं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343(1) में उल्लेख है कि देवनागरी में लिखित हिंदी भारतीय संघ की राजभाषा होगी। किंतु अनुच्छेद 343(2) में यह उल्लेख किया गया कि संविधान लागू होने के (1950 से) 15 वर्षों तक हिंदी के साथ अंग्रेजी भी राजकाज की भाषा बनी रहेगी। अत: अंग्रेजी को 1965 तक की छूट या राज्याश्रय प्राप्त हो गया।

भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में अब तक 22 भाषाओं को स्थान दिया गया है और भारत में बोली जाने वाली लगभग 39 भाषाएँ इस सूची में सम्मिलित होने के लिए संघर्षशील हैं। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस सूची में अंग्रेजी कहीं नहीं है। यों तो सारे विश्व में हिंदी का डंका बज रहा है। हिंदी संसार की सभी संस्कृतियों के बीच एक सेतु है। फिर भी भारत में अभी भी इसके साथ सौतेला व्यवहार हो रहा है। हमें इस बात पर भी गौर करना होगा कि केवल साहित्य दर्शन आदि से कोई भाषा समृद्ध नहीं हो जाती। जब तक जीवन के दूसरे व्यावहारिक अनुशासनों यथा – समाज, राजनीति, अर्थतंत्र, वाणिज्य, व्यवसाय, प्रशासन, कार्यालयी पद्धति, विधि, पत्रकारिता, चिकित्सा, शिल्प, कला, विज्ञान, रोजगार आदि क्षेत्रों में उसकी बढ़त नहीं होगी, हिंदी सच्चे अर्थों में पूर्ण राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती।

हिंदी सॉफ्टवेयर, शब्दकोश और कई प्रकार की निर्मित शिक्षण सामग्रियों द्वारा हिंदी माध्यम से कई देशों में अध्ययन–अध्यापन प्रारंभ हो चुका है। हिंदी भाषा में प्रयुक्त नागरी लिपि के वैज्ञानिक स्वरूप का वर्णन करते हुए माइक्रोसॉफ्ट के संस्थापक 'बिलगेट्स' को यह कहना पड़ा कि "अब बोलकर लिखने की तकनीक विकसित हो जाएगी तो हिंदी सर्वाधिक सफल भाषा होगी।" यूनिकोड का आगमन हिंदी भाषा के लिए किसी वरदान से कम नहीं है। इसके माध्यम से हिंदी भाषा सरलता से इंटरनेट पर आने लगी है। हिंदी के ब्लॉगों में वृद्धि हुई है और ई–मेल की बहुलता ने उसकी श्रेष्ठता को कायम करने में पर्याप्त सहायता की है।

2018 में हुए एक सर्वे में कहा गया है कि इंटरनेट की दुनिया में हिंदी ने अंग्रेजी को पछाड़ दिया है। आज विश्व के 600 विश्वविद्यालयों में हिंदी पढ़ाई जाती है।

हिंदी एक समर्थ व सक्षम भाषा है। इसकी नागरी लिपि वैज्ञानिकता से परिपूर्ण है। आज इसके प्रयोगकर्ताओं की संख्या 1 अरब से ऊपर पहुँच गई है। विश्व की समर्थ व सक्षम भाषाओं में हिंदी की गणना की जाने लगी है। इसके समझने, बोलने व लिखने वालों की संख्या निरंतर बढ़ रही है। विश्व के कई देशों में हिंदी का उच्चस्तरीय अध्ययन-अध्यापन हो रहा है। दैनंदिन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विश्व के एक अरब से अधिक लोग इसका प्रयोग कर रहे हैं। यद्यपि अभी राष्ट्रसंघ में हिंदी आधिकारिक भाषा नहीं बन सकी है पर व्यावहारिक भाषा के रूप में इसकी मान्यता है। राष्ट्रसंघ के वर्तमान महासचिव ने हिंदी की एकता विधायिनी शक्ति और सांस्कृतिक उर्जा की सराहना की है - ''संसार के लोगों को एक दूसरे के निकट लाने के लिए हिंदी समन्वय सूत्र की तरह कार्य कर रही है। यह संसार की सभी संस्कृतियों के बीच एक सेतु है।'' हिंदी सॉफ्टवेयर, शब्दकोश और कई प्रकार की निर्मित शिक्षण सामग्रियों द्वारा हिंदी माध्यम से कई देशों में अध्ययन और अध्यापन प्रारंभ हो चुका है। हिंदी की लोकप्रियता ने इसके प्रयोगकर्ताओं की संख्या अंग्रेजी की अपेक्षा कई गुना बढ़ा दी है। फिर भी राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रशासनिक, व्यावसायिक और वैचारिक गतिविधियों में अंग्रेजी का ही बोलबाला है। स्वतंत्र भारत में यह कितना विस्मयकारी है।

हिंदी भारत के सभी प्रांतों में समझी, बोली और लिखी जा रही है। भारत के अतिरिक्त नेपाल, भूटान, श्रीलंका, तुर्की, बांग्लादेश, पाकिस्तान, तिब्बत, म्यांमार, अफगानिस्तान, गुयाना, मॉरिशस, त्रिनिडाड, सूरीनाम, क्यूबा, रूस, टोबेको, फिजी, दुबई, मलेशिया, इंडोनेशिया, सिंगापुर, मेक्सिको, दक्षिण अफ्रीका, थाईलेण्ड तथा नार्वे की एक विशाल आबादी हिंदी का प्रयोग करती है। इनमें से कई देशों में इसकी पढ़ाई-लिखाई भी होती है। उक्त देशों में अधिकांशतः अरबी, फ़ारसी, उर्दू का प्रयोग किया जाता है। इन देशों में बोली जाने वाली भाषाओं को यदि नागरी लिपि में लिख दिया जाए तो वे हिंदी ही कही जाएँगी। या हिंदी की एक शैली होगी। इस प्रकार इन देशों के साहित्य, विस्तृत ज्ञान-संपदा, शब्द-संपदा और सांस्कृतिक एकता की उर्जा को हम हिंदी के पक्ष में जोड़ कर उसकी सीमा का विस्तार कर सकते हैं। इतना ही नहीं इन भाषाओं में व्याप्त ज्ञान-विज्ञान, चिकित्सा, प्रौद्योगिकी को हिंदी माध्यम के पाठ्यक्रमों द्वारा अपने लिए उपयोगी बना सकते हैं। इस पद्धति में लिप्यांतरण और हिंदी भाषा में अनुवाद द्वारा हिंदी माध्यम का एक वैज्ञानिक पाठ्यक्रम बन सकता है।

अंग्रेजी को प्रतिष्ठित करने के लिए स्वतंत्र भारत में प्रायः पाँच दशकों तक यह तर्क दिया जाता रहा कि हिंदी में ज्ञान विज्ञान, प्रौद्योगिकी, चिकित्सा, आनुवांशिकी, वाणिज्य, कृषि, खेल, रक्षा-शिक्षा और संस्कृति आदि पर पुस्तकें उपलब्ध नहीं हैं। अतः माध्यम भाषा का कार्य अंग्रेजी ही करती रहेगी। उच्च शिक्षा और प्रशासन में अंग्रेजी में कार्य संपन्न होंगे। न्यायालयों के निर्णय अंग्रेजी में दिए जाएँगे, पर आज यह धारणा निराधार हो चुकी है। भाषा और ज्ञान के विभिन्न अनुशासनों में हिंदी अपना महत्त्वपूर्ण दखल दे चुकी है। प्रौद्योगिकी, चिकित्सा, आनुवंशिकी, वाणिज्य जैसे विषयों में भी हिंदी माध्यम की अनेक पुस्तकें प्रकाशित हैं। अतः एक समर्थ भाषा (हिंदी) को सभी प्रकार के विषयों का माध्यम बनाने का अभियान, नवोदित अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल, 'महात्मा गाँधी अन्तरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा, तथा सरकार द्वारा स्थापित हिंदी संस्थानों को चलाना चाहिए। इस संदर्भ में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि हिंदी की शब्द-संपदा अंग्रेजी से ढाई गुना अधिक है। एक सर्वेक्षण के अनुसार हिंदी में सात लाख शब्द हैं और उनका प्रयोग भी किया जाता है जबकि अंग्रेजी में मात्र तीन लाख। इसका सबसे बड़ा कारण हिंदी की लोकभाषाएँ हैं जिनमें शब्दों की अपार-संपदा निहित है।

आज हिंदी विश्व बाजार की भाषा बनने के लिए पूर्ण समर्थ है। स्वाधीनता आंदोलन के दौरान साहित्य एवं पत्रकारिता के माध्यम से हिंदी ने विकास की जो गति पकड़ रखी थी, वह आज भी अमंद चल रही है। सिनेमा, धारावाहिक, फेसबुक, अंतरताना (इंटरनेट) इत्यादि आधुनिक माध्यमों से यह विश्व बाजार की उपयोगी व महत्त्वपूर्ण भाषा बन चुकी है। माइक्रोसॉफ्ट, गूगल, आई.बी.एम., याहू और ऑरेकल जैसी कम्पनियाँ हिंदी माध्यम से अरबों-खरबों का व्यापार कर रही हैं और प्रयोग को बढ़ावा दे रही हैं। विश्व स्तर पर नृत्य, संगीत, योग, आयुर्वेद इत्यादि पारंपरिक कलाओं एवं विद्यालयों को सीखने के लिए लोगों का रूझान हिंदी के प्रति बढ़ रहा है। अभिव्यक्ति के नए-नए साधनों के विकास में हिंदी माध्यम की आवश्यकता निरंतर विकसित हो रही है। यू-टयूब, गूगल, फेसबुक, ट्विटर, ऑरकुट आदि के माध्यम से हिंदी का बाजार और प्रचार बढ़ रहा है। यूनिकॉड का आगमन हिंदी भाषा के लिए किसी वरदान से कम नहीं। आज हिंदी कम्प्यूटर की महत्त्वपूर्ण भाषा बन चुकी है। हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के फॉण्ट्स में एकरूपता इसके लिए अनुकूल वातावरण बना रही है। यूनीकोड के आगमन से हिंदी सहित

आज हिंदी विश्व बाजार की भाषा बनने के लिए पूर्ण समर्थ है। स्वाधीनता आंदोलन के दौरान साहित्य एवं पत्रकारिता के माध्यम से हिंदी ने विकास की जो गति पकड़ रखी थी, वह आज भी अमंद चल रही है। सिनेमा, धारावाहिक, फेसबुक, अंतरताना (इंटरनेट) इत्यादि आधुनिक माध्यमों से यह विश्व बाजार की उपयोगी व महत्त्वपूर्ण भाषा बन चुकी है। माइक्रोसॉफ्ट, गूगल, आई.बी.एम., याहू और ऑरेकल जैसी कम्पनियाँ हिंदी माध्यम से अरबों-खरबों का व्यापार कर रही हैं और प्रयोग को बढ़ावा दे रही हैं। विश्व स्तर पर नृत्य, संगीत, योग, आयुर्वेद इत्यादि पारंपरिक कलाओं एवं विद्यालयों को सीखने के लिए लोगों का रूझान हिंदी के प्रति बढ़ रहा है। अभिव्यक्ति के नए-नए साधनों के विकास में हिंदी माध्यम की आवश्यकता निरंतर विकसित हो रही है।

अन्य भारतीय भाषाएँ सहजता से इंटरनेट पर आने लगी हैं। हिंदी के ब्लॉगों में बढ़ोतरी और ई-मेल की बहुलता ने उसकी श्रेष्ठता को कामय करने में पर्याप्त सहायता की है। ई-समाचार पत्र पढ़ना एक क्रांति जैसा है। कहने का तात्पर्य यह है कि आज हिंदी एक वैज्ञानिक एवं समर्थ भाषा है। आधुनिक तकनीकों से इसका कदमताल मिल रहा है और कंप्यूटर के निकष पर यह खरी सिद्ध हो चुकी है। इसमें संस्कृति की एक वेगवती धारा भी बहती है जो मानव मनों को जोड़ने में समर्थ है। आवश्यकता है गुलाम मानसिकता से बाहर आने और इसकी मजबूती और वैज्ञानिकता समझने की।

आज विश्व पटल पर हिंदी ने हर क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है। हिंदी को पढ़ने, लिखने व जानने वाले विश्व के कोने-कोने में विद्यमान हैं। सर्वश्री अभिमन्यु अनत (मॉरिशस), उल्फत मुखीबोवा (उज्बेकिस्तान), एवा अरादि (हंगरी), अलक्सई पेतोविच बरान्निकोव (रूस), अलक्सान्द्र सेन्केविच (मास्को), एडविन ग्रीब्ज, ओदोलेन स्मेकल (प्राग), ई.वी. स्टिविक, ई. तुर्वियानी (इटली), डॉ. एफ. आलविन, एम.टी. एडम, लुइजिपियो तस्सीतोरी (इटली), केरीन शोमर (केलिफोर्निया), कैथरीन जी. हैनसन, के.कोगा, क्यूमाँ दोई, गार्सा द तासी (फ्रांस), गिल क्राइस्ट, जान फगुर्सन (लंदन), जार्ज ग्रियर्सन (आयरलैण्ड), गेनादी शलौम्पेर (इजरायल), जियांग जिंगकुई (चीन), जे.एन. कारपेंटर (लंदन), जान.टी. प्लाट्स, जी.एच. वेस्ट काट, जान बिम्स, जी. डब्ल्यू बिक्स, टी. ग्राहम बेली, डब्ल्यू एम. कलेवरट, डब्ल्यू.आर. एम. होलरायड, डगलस पिहिल, तोकेशि फुजिड़ (जापान), प्रो. दोनातेल्ला दोल्चीनी (इटली), धुस्वा सायमि (नेपाल) निकोलस बलवीर (पेरिस), फ्रेचेस्का आर्सिनी (यू.के.) प्रभृति विद्वान हुए हैं, जिन्होंने हिंदी की सेवा को ही अपने जीवन का ध्येय बनाया। यही नहीं हिंदी की कई प्रसिद्ध रचनाओं का जर्मनी, जापानी, अंग्रेजी, चीनी, फ्रेंच, रूसी आदि भाषाओं में हिंदी प्रेमी विदेशी साहित्य प्रेमियों द्वारा अनुवाद भी किया गया है, जिनमें गोदान, तीसरी कसम, मैला आँचल, नंददास के पद, रामचरित मानस, कबीर बीजक, बिहारी सतसई, हनुमान चालीसा, ढोलामारू, निर्मला, बसन्ती, विनय पत्रिका, कवितावली, शमशेर की कविताएँ बच्चन की आत्मकथा 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ, दश द्वार से सोपान तक, प्रेमसागर, हीर राँझा, तोता मैना, बकरी, आषाढ़ का एक दिन आदि प्रमुख हैं।'

विश्व की सर्वाधिक समृद्ध भाषा होने पर भी हिंदी को वह स्थान नहीं मिल पाया है, जिसकी वह हकदार है। कठिनाई यह नहीं है कि वह क्लिष्ट है। संकट हमारी मानसिकता का है। अंग्रेजी चूँकि शासकों की भाषा रही है, अतः अंग्रेजों के चले जाने पर भी शासक-शासित वाला भाव अभी भी लोगों के हृदय से गया नहीं है। यही कारण है कि जो शासन करना चाहते हैं वे अंग्रेजी को छोड़ना नहीं चाहते। दूसरा यह कि हमारी लगभग 80 प्रतिशत जनता आज भी निर्धनता से जूझ रही है। उसे अपनी रोजी-रोटी की चिंता से ही मुक्ति नहीं मिलती, वे हिंदी भाषा के विकास के लिए क्या प्रयास करेंगे? फलतः अंग्रेजी परस्त इनका लाभ उठा कर अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। आश्चर्य तो यह है कि "भारत में केवल 3 प्रतिशत लोग ही अंग्रेजी बोलते तथा समझते हैं फिर भी वह हिंदी पर शासन कर रही है।"

इधर भारत सरकार ने राजभाषा विभाग को कार्यालयों में हिंदी के प्रयोग का कार्यभार सौंपा, किंतु दुखद स्थित है कि वे भी अपना कार्य निष्ठापूर्वक नहीं कर रहे हैं। अतः हिंदी कार्यालयों में दूसरे दर्जे की भाषा बन कर रह गई है। यह खेद की बात है कि संयुक्त राष्ट्रसंघ में अरबी जैसी कम लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा को आधिकारिक भाषा मान लिया गया किंतु हिंदी अभी भी संघर्ष कर रही है।

आज कम्प्यूटर के माध्यम से भी हिंदी इक्किसवीं सदी की सफल अभिव्यक्ति का आधार बन चुकी है। वैज्ञानिक 'टेम्पर' के समस्त कारकों को दूर तक स्वयं में ढालती भाषा हिंदी, हमारी संस्कृति, ज्ञान, दर्शन और अध्यात्म की विश्व में संवाहक हो रही है। विश्व की व्यापारिक विवशता उसके महत्त्व को स्वीकार कर रही है।

आज हिंदी अपनी स्वाभाविक गति और शक्ति के साथ आगे बढ़ती जा रही है। हिंदी की ताकत उसकी जीवनी शक्ति है। हिंदी में समय के अनुसार ढलने की शक्ति है। जो भाषा समय के साथ अपने को नहीं ढाल पातीं वे एक दिन काल के गाल में समा जाती हैं। इस दृष्टि से हिंदी का भविष्य बहुत उज्ज्वल है। ❑

भारत में हिंदी भाषा की वर्तमान स्थिति

डॉ. अरुण कुमार चतुर्वेदी
असि. प्रोफेसर,
शिक्षा विभाग (बी.एड.)
ल.सि.म. राजकीय
स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
पिथौरागढ़, (उत्तराखण्ड)

भाषा किसी भी व्यक्ति के जीवन का महत्त्वपूर्ण अंग होती है। भाषा के द्वारा ही व्यक्ति अपने मनोभावों की सशक्त अभिव्यक्ति कर सकता है। हिंदी एक शक्तिशाली भाषा है जो सभी स्थान विशेष व शैक्षिक स्तर पर प्रयोग की जाती है। हिंदी सम्पूर्ण मानव जाति का वह अंग है जिसके बिना वह अधूरे हैं। भाषा ज्ञान शिक्षा की आधारशिला है क्योंकि भाषा से ज्ञान से शिक्षा एवं अन्य कार्य होते हैं सभ्य समाज में मानव सृष्टि की उन्नति में भाषा और शिक्षा की वैसी ही आवश्यकता है जैसी जीवन की रक्षा के लिए स्वास्थ्य एवं भोजन की मनुष्य भाषा के द्वारा अपने सूक्ष्म विचारों को व्यक्त करता है वह शिक्षा द्वारा अपनी विचार शक्ति की वृद्धि और विचार की शुद्धि द्वारा उचित अनुचित का निर्णय करता है। हिंदी को राष्ट्रीयता का गौरव कहा जाता है। महात्मा गाँधी जी ने अपने वक्तव्य में कहा है कि ''यदि वास्तव में हिन्दुस्तान को राष्ट्र बनाना है तो चाहे कोई माने या न माने राजभाषा तो हिंदी ही बन सकती है क्योंकि जो स्थान हिंदी को प्राप्त है वह दूसरी भाषा को कभी नहीं मिल सकता।'' स्पष्ट है कि हिंदी राष्ट्र का सम्मान है और हिंदी भाषा का प्रयोग सम्पूर्ण देश में होता है। हिंदी के द्वारा ही शिक्षण कार्य किया जाता है जिसे बालक आसानी से समझता है और व्यवहार में भी लाता है।

भाषा के सशक्त माध्यम द्वारा ही व्यक्ति अपने विचारों की अभिव्यक्ति सहजता से करने में सफल रहता है। हिंदी भाषा को समझने से पूर्व हमें भाषा को समझना आवश्यक होगा कि मानव जीवन में भाषा की क्या महत्ता है क्योंकि मानव एक सामाजिक प्राणी है वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक दूसरे से वार्तालाप कर अपनी अभिव्यक्ति को प्रदर्शित करता है। वह सरल और सहज क्रियाओं के माध्यम से आचार-विचार और व्यवहार को समझ कर अपनी प्रतिक्रिया देता है जिसे हम भाषा कहते हैं। वैसे अपनी आवश्यकता एवं अपने विचारों को दूसरे तक पहुँचाने के अन्य माध्यम भी हैं जैसे भाव, मुद्रा, संकेत आदि के द्वारा। परन्तु विश्व में सामान्यत: विभिन्न प्रकार की भाषाएँ क्षेत्र विशेष में अलग-अलग तरह से बोली जाती हैं जो कि सबसे सरल तरीका है अपनी भावना और विचारों को दूसरों तक पहुँचाने का। इसी में हिंदी भारत में बोली जाने वाली भाषा जिसका प्रयोग राष्ट्र के अधिकतर व्यक्ति करते हैं।

भाषा एक ऐसा माध्यम व साधन है जिसमें एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के साथ संबंध स्थापित करने का रास्ता दिखाता है। व्यक्ति समाज में रहते हुए आपस में संवाद स्थापित करता है साथ ही समाज से ही अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति बोलकर दूसरों को समझा कर, कर सकता है जो भाषा के माध्यम से ही सम्भव है। भाषा के माध्यम से ही व्यक्ति अपने विचार, भाव, अभिव्यक्ति को प्रकट करता है। भाषा पर विभिन्न विद्वानों द्वारा अपने-अपने विचार प्रस्तुत किए गए जो इस प्रकार हैं-

स्वीट महोदय के अनुसार - ''ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों का प्रकट करना ही भाषा है।''

बिट्रेनिका विश्वकोष के अनुसार - ''भाषा ध्वनि-प्रतीकों या संकेतों की एक ऐसी मान्य व्यवस्था है जिसके द्वारा एक समाज के लोग आपस में विचार-विनिमय करते हैं।''

भारत एक ऐसा देश है जहाँ हर प्रकार की संस्कृति, जाति, सभ्यता, प्रजातियाँ व

सम्प्रदाय के लोग निवास करते हैं। सभी स्थान विशेष की अपनी अलग बोली होती है परन्तु हिंदी भाषा इन सभी में अपनी अहम् भूमिका रखती है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 343 (1) के द्वारा हिंदी राजभाषा के रूप में स्वीकार की गयी है। भारतीय संविधान की 8वीं अनुसूची में 18 भारतीय भाषाओं को मान्यता दी गयी है। अब संविधान के भाग 5 एवं 6 के क्रमशः अनुच्छेद 120 तथा 210 में एवं भाग 17 के अनुच्छेद 343 से 351 में राजभाषा हिंदी के संबंध में विभिन्न प्रावधान के साथ 22 भाषाओं को संविधान की अनुसूची-8 में मान्यता दी गई है। अतः हिंदी संवैधानिक रूप में भारत की राजभाषा के रूप में अहम् भूमिका निभाती है। सामान्यतः हिंदी एक ऐसी भाषा है जिसे कश्मीर से कन्याकुमारी और असम से गुजरात तक का जनमानस प्रयोग करता है। वर्तमान में हिंदी का विस्तार सम्पूर्ण राष्ट्र के सभी क्षेत्र में किया जा रहा है जैसे- शिक्षा, संचार, व्यापार एवं पर्यटन आदि अनेक पहलू हैं परन्तु हिंदी का प्रयोग शिक्षा में सभी क्षेत्रों में किया जाता है। हिंदी शिक्षण गतिशील एवं सुनियोजित प्रक्रिया है। हिंदी शिक्षण के द्वारा बालक अपनी भाषायी दक्षताओं को व्यक्त कर सकता है। सुनने सम्बन्धित कौशल, बोलने का लहजा एवं शैली, कहानी सुनना-सुनाना, परिस्थितियों के अनुसार संवाद करना और विभिन्न प्रकार के कौशलों का विकास इसके द्वारा होता है। हिंदी देश के अधिकांश लोगों की मातृभाषा होने के साथ-साथ निजी भाषा भी है और अपनी भाषा में विचारों को अभिव्यक्त करने, शिक्षा ग्रहण करने, भाव प्रकट करने की खुशी व्यक्ति के मुख पर छलकती है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने इसे निम्न शब्दों में पिरोया है।

निज भाषा उन्नति अहै,
सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के,
मिटत न हिय को सूल।।

इसी तरह से कहा जा सकता है कि हिंदी भाषा माँ के आँचल, लोरियाँ और स्नेह की तरह है जिसका सम्बन्ध बालक से माँ के गर्भ से आरम्भ होता है और मृत्यु पर्यन्त तक भावात्मक रूप से जुड़ जाता है। वह हिंदी को भाषा के रूप से ज्यादा स्नेह का भाव, पूर्वजों का आशीर्वाद, रीति-रिवाज आदर्श को माध्यम मानते हैं जिसके द्वारा राष्ट्र की सभ्यता संस्कृति परम्परा आदि को जीवित रखे हुए है।

हिंदी शिक्षण

भाषा एक कौशल है, एक कला है और कला में निखार आता है। प्रशिक्षण और अभ्यास से भाषायी दक्षता से अभिप्राय बालकों को भाषायी कौशलों को सुनना, बोलना पढ़ना और लिखने में दक्ष बनाना है। जिस प्रकार अन्य कलाओं को दूसरों का अनुकरण करके, प्रशिक्षण प्राप्त करके और सतत् अभ्यास द्वारा सीखा जाता है। ठीक उसी प्रकार शब्द भण्डार वृद्धि, शुद्ध और सुसंगठित वाक्य रचना, शुद्ध उच्चारण और शुद्ध लेखन भी हम अनुकरण, प्रशिक्षण और अभ्यास के द्वारा सीखते हैं तभी उसमें प्रवीणता, कुशलता निपुर्णता, दक्षता, सफलता प्राप्त करते हैं।

हिंदी भाषा हमारे राष्ट्रीय गौरव एवं व्यक्तित्त्व का प्रतीक है। हमारी राष्ट्रभाषा है, यह मातृभाषा है। अतः इसकी सम्प्रेषण कला को विकसित करना हमारा कर्तव्य है। भारत में हिंदी को पल्लवित करने वाले ऐतिहासिक महापुरुषों के योगदान के उत्तरदायी बोझ को ढोने में समर्थ हों। हिंदी भाषा व हिंदी शिक्षण राष्ट्र का गौरव है। भारतवासी हिंदी को सांस्कृतिक एकता का प्रतीक, राष्ट्रीय एकता, भावनात्मक एकता का प्रतीक मानते हैं और वह यह अपेक्षा करते हैं कि उनकी आने वाली पीढ़ी इसी के द्वारा सम्पूर्ण कार्य का संचालन करे जिससे वह अपने राष्ट्र की भाषा को भविष्य में भी क्रियाशील रख सकें।

बालक जब जन्म लेता है तो परिवार के द्वारा बोली जाने वाली ध्वनियाँ बच्चे के कानों में गूंजने लगती है। वह चेतन व अचेतन रूप से ध्वनियों को ग्रहण करने लगता है। धीरे-धीरे समझता है और अनुकरण करते हुए अपनी अभिव्यक्ति देने लगता है और इस प्रकार से वह आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग करने लगता है परन्तु अनुकरण के द्वारा सीखी गयी भाषा जीवन-यापन व जीवन जीने की कला को पूर्ण नहीं करती है। स्वयं की अभिव्यक्ति को प्रभावशाली, सरल, सहज और शुद्ध रूप से प्रयोग करने के लिए सही शब्द-ज्ञान, वाक्य-ज्ञान, व्याकरण, नियमों का ज्ञान होना आवश्यक है इसके लिए शिक्षक की, विद्यालय की तथा शिक्षण की आवश्कता होती है। वही भाषा शिक्षण है जो भाषा के सही रूप में हिंदी शब्द, अर्थ, ध्वनि, साहित्य एवं मुहावरा आदि का ज्ञान कराता है तो वह हिंदी शिक्षण कहलाता है अर्थात् जिस प्रक्रिया द्वारा हिंदी भाषा से संबंधित भाषा-कौशलों को समझने, प्रयोग करने, चिंतन व मनन के द्वारा स्वयं की अभिव्यक्ति को प्रभावशाली बनाया जाता है साथ ही जीवन जीने की कला को सरल बनाता है जिससे व्यक्ति विशेष क्रियाशील रहकर स्वयं, समाज व राष्ट्र के योगदान के काबिल बनाता है क्योंकि भाषा के द्वारा ही व्यक्ति अपनी क्षमता, योग्यता व कौशलों को दूसरे के समक्ष रख सकता है।

हिंदी-शिक्षण में बालक को व्यवहार में परिवर्तन लाना होता है और यह परिवर्तन व्यवहार के सभी पक्षों में होना चाहिए- ज्ञानात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक। बालक के व्यावहारिक गुणों में बढ़ोत्तरी, हिंदी शिक्षण की सुगमता से आकलन कर सकता है जो कि शिक्षण को बालक के व्यवहार में परिवर्तन लाने की प्रक्रिया को कहा जाता है। हिंदी शिक्षण के द्वारा वह हिंदी के नियमों, व्याकरण पद्धति आदि का अध्ययन कर कण्ठस्थ करता है। शिक्षा में सभी विषयों का अध्ययन् वह हिंदी भाषा का प्रयोग मौखिक व लिखित रूप से करके कर सकता है। विषय-वस्तु का उच्चारण, गति,

स्वर वह हिंदी शिक्षण में ज्ञान अर्जित कर लेता है जिससे वह शब्दों का चयन, वाक्यों की रचना करना सीख लेता है और अपनी अभिव्यक्ति वह सभी क्षेत्रों में प्रकट कर सकता है।

वर्तमान में हिंदी भाषा की स्थिति

हिंदी भाषा का जन्म संस्कृत भाषा से हुआ है जो कि भारोपीय परिवार की एक उत्कृष्ट भाषा है। संसार की कई प्रचलित भाषाओं का भारोपीय परिवार की संस्कृत से घनिष्ठ संबंध है। यही कारण है कि संस्कृत के काफी शब्द संसार की अन्य भाषाओं से मिलते-जुलते हैं। समय के साथ-साथ संस्कृत में जन्मी इस हिंदी भाषा ने अपने भंडार को अत्यंत समृद्ध किया है और संसार की भाषाओं में अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया है। आज विश्व के सभी विकसित देशों, जैसे जर्मनी, फ्रांस, इंग्लैंड, रूस एवं अमरीका आदि देशों के प्रसिद्ध विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा एक महत्त्वपूर्ण विदेशी भाषा के रूप में पढ़ाई जाती है। एशिया, अफ्रीका और आस्ट्रेलिया महाद्वीप के कई देशों में हिंदी का अध्ययन करने वाले छात्रों की संख्या दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है।

भारत दुनिया का सबसे बड़ा प्रजातांत्रिक राष्ट्र है। विश्वशांति और अंतरराष्ट्रीय सद्‌भावना में निर्गुट देश के रूप में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करने के कारण इस देश की संस्कृति, आदर्श और मूल्यों की ओर विभिन्न देशों का ध्यान आकर्षित हो रहा है। परिणामस्वरूप इस देश में राष्ट्रभाषा हिंदी का अध्ययन करने में भी उनकी रुचि बढ़ रही है। विकासशील देशों में तो भारतवासी उनके विकास में अपनी जनशक्ति के सहारे काफी तकनीकी और औद्योगिक सहयोग प्रदान कर रहे हैं। इस तरह से विभिन्न देशों में भारतवासियों के एक बड़ी संख्या में बस जाने के कारण, आज इस बात की आवश्यकता हो गई है कि इन देशों में प्रारंभ से ही हिंदी की शिक्षा की व्यवस्था की जाए। विश्व के सभी देशों में हिंदी का प्रसार होने के कारण ही आज इस बात की

आवश्यकता महसूस की जा रही है कि संयुक्त राष्ट्रसंघ में भी हिंदी को स्थान दिया जाए।

आज हिंदी भाषा के समृद्ध साहित्य को पढ़ने की इच्छा विश्व के प्राय: सभी देश व्यक्त कर रहे हैं। तुलसीकृत रामचरितमानस का अनुवाद तो विश्व की अनेक भाषाओं जैसे - जर्मनी, रूसी, इंग्लिश, फ्रेंच, जापानी आदि में हो चुका है। इसी तरह प्रेमचंद के उपन्यासों और कहानियों, जयशंकर प्रसाद की कामायनी आदि रचनाओं, डॉ. रांगेय राघव के उपन्यासों आदि अनेक हिंदी रचनाओं का विभिन्न विदेशी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। इन अनूदित ग्रंथों ने संसार की विभिन्न भाषाओं के साहित्य को काफी समृद्ध और प्रभावित किया है। इस तरह हिंदी भाषा अपने साहित्य को समृद्ध करती हुई विश्व की विभिन्न भाषाओं में एक महत्त्वपूर्ण स्थान बनाने के लिए प्रयत्नशील है।

निष्कर्ष - अन्त में मैं यही कहना चाहूँगा कि हिंदी भाषा हमारे राष्ट्रीय गौरव एवं व्यक्तित्त्व का प्रतीक है। हमारी राष्ट्रभाषा है, यह मातृभाषा है। अत: इसकी सम्प्रेषण कला को विकसित करना हमारा कर्तव्य है। भारत में हिंदी को पल्लवित करने वाले ऐतिहासिक महापुरुषों के योगदान के उत्तरदायित्व को उठाने में समर्थ हों। हिंदी भाषा व हिंदी शिक्षण राष्ट्र का गौरव है। भारतवासी हिंदी को सांस्कृतिक एकता का प्रतीक, राष्ट्रीय एकता, भावनात्मक एकता का प्रतीक मानते हैं और वह यह अपेक्षा करते हैं कि उनकी आने वाली पीढ़ी इसी के द्वारा सम्पूर्ण कार्य का संचालन करे जिससे वह अपने राष्ट्र की भाषा को भविष्य में भी क्रियाशील रख सकें। हिंदी भाषा के द्वारा शिक्षण कार्य करना व बालकों का जल्दी ही प्रतिक्रिया करना इस बात को परिलक्षित करता है कि हिंदी सरल व उचित समय में समझ आने वाली भाषा है जिसके प्रयोग से शिक्षण कार्य ज्यादा प्रभावशाली प्रतीत होता है एवं बालक भी क्रिया प्रतिक्रिया देने से पीछे नहीं हटते हैं। हिंदी की देवनागरी लिपि वैज्ञानिक रूप से काफी प्रभावी व श्रेष्ठ है क्योंकि हिंदी में लिखा साहित्य भी श्रेष्ठता की दृष्टि से संसार की किसी भी भाषा से हीन नहीं है। इस तरह हिंदी शनै:-शनै: व्यवहारात्मक रूप से राष्ट्रभाषा का संपूर्ण गौरव प्राप्त करने की ओर अग्रसर हो रही है और अगर हम दक्षिणी प्रांतों के निवासियों के हृदय से हिंदी के बारे में फैली हुई भ्रांतियों, शंकाओं तथा डर को निकाल सकें तथा वहाँ हिंदी भाषा को सीखने का सहज वातावरण तैयार कर सकें तो वह दिन दूर नहीं जब हिंदी राष्ट्रभाषा के रूप में अपना पूर्ण स्थान प्राप्त करने में सफल होकर राष्ट्र की राजनैतिक, भावात्मक, सांस्कृतिक एकता का प्रतीक बनकर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पूरी मान्यता प्राप्त करने की ओर अग्रसर हो सकेगी। ❑

हिंदी के विकास में अन्य भाषाओं का योगदान

डॉ. शिव शरण कौशिक
सह-आचार्य,
हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय
राजगढ (अलवर)

समूचे भारत में चार-पाँच सौ वर्षों पूर्व तक धर्म, दर्शन, विज्ञान, चिकित्सा तथा व्यवहार आदि की भाषा एक ही थी, और यह भाषा संस्कृत थी। भारतवर्ष का जो कुछ श्रेष्ठ और अनुकरणीय है वह इसी भाषा में संगृहीत है। कालांतर में विकसित हुई पालि, प्राकृत, अपभ्रंश तथा अन्यान्य भाषा-विभाषाओं में जो भी ज्ञान-परंपरा आगे बढ़ी, उसका मूल भारत की आदि भाषा संस्कृत में सर्जित है। यह भी सच्चाई है कि अलग-अलग काल खंडों में अलग-अलग लोक भाषाओं का संस्कृत से उद्‌भव ही नहीं हुआ अपितु उनमें जो महत्त्वपूर्ण सामाजिक-साहित्यिक रचनाएँ लिखी गईं उनमें से बहुतों में संस्कृत वांग्मय का रूपांतरण अथवा अनुकृतिरूप ही देखने को मिलता है। हाँ, नई भाषाएँ अवश्य ही अपना लोक-प्रभाव रखती हैं परंतु यह कहा जा सकता है कि हजारों वर्षों तक भारत वर्ष के सर्वोत्तम को, उसके ज्ञान-विज्ञान को, अध्यात्म और दर्शन को, चिकित्सा विज्ञान और खगोल विज्ञान को, राजनीति और व्यवहार को, कोश और व्याकरण को तथा उसके समग्र चिंतन को संस्कृत ने ही अपना आधार दिया है। उत्तर के कश्मीर से लेकर दक्षिण के केरल तक की परवर्ती भाषाओं के शब्दकोश, उनका वाक्य-विन्यास तथा व्याकरण कहीं- ना-कहीं संस्कृत से ही प्रभावित रहा है।

आगे चलकर आक्रमणकारी विदेशी मुगल बादशाहों ने भी अपने भारत आगमन के आरंभिक वर्षों में संस्कृत तथा नागरी अक्षरों को ही अपने सिक्कों में प्रयुक्त किया था परंतु बाद में समय बदला और धीरे-धीरे अदालतों तथा राजकार्य की भाषा फ़ारसी हो गई तथा एक बड़े समुदाय की धर्म भाषा अरबी (जिसका वर्तमा रूप उर्दू है) हो गई। उल्लेखनीय है कि इन बादशाहों ने भी संस्कृत ग्रंथों की अरबी-फ़ारसी भाषा में टीकाएँ लिखावाईं, अनुवाद करवाए।

भारत में भाषा, साहित्य, जीवन-व्यवहार, शिक्षा, अनुसंधान, ज्ञान- विज्ञान आदि को सर्वाधिक प्रभावित किया ब्रिटिशराज ने। ब्रिटिशकाल में पूरी तरह भारत की शिक्षा, न्याय, प्रशासन, व्यापार, उद्योग, विचार- वितर्क की भाषा अंग्रेजी हो गई। उन्होंने भारत के चुने हुए मनीषी प्रतिनिधियों में भी अंग्रेजी के प्रति श्रेष्ठताबोध भर दिया जिससे धीरे-धीरे भारत में ज्ञान-विज्ञान के लिए अंग्रेजी का वर्चस्व बढ़ता गया। तदुपरांत प्रतिक्रिया स्वरूप भारतीय स्वतंत्रता आंदोलनकारियों ने भारत की राष्ट्रीय एकता के मजबूत सूत्र के रूप में हिंदी को प्राथमिकता दी तथा देश भाषा के रूप में न केवल हिंदी को प्रसारित किया बल्कि हिंदी में ही सारा आजादी का आंदोलन पूर्व से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण तक लड़ा गया और वही हिंदी स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1950 में भारत की राजभाषा बनी।

हिंदी को राजभाषा और राष्ट्रभाषा बनाने के भारत के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक आंदोलन भी चले और अंततः शौरसेनी अपभ्रंश से निकली भाषा पश्चिमी हिंदी की खड़ी बोली वर्तमान में भारत की राजभाषा, प्रशासनिक भाषा बन गयी। साहित्यिक और कामकाजी भाषा के रूप में भी हिन्दी का प्रसार और प्रभाव तेजी से बढ़ा। संविधान की आठवीं अनुसूची में हिंदी के साथ भारत की अन्य 13 प्रांतीय भाषाओं के साथ कुल 14 भाषाओं को 1950 में मान्यता प्रदान की गई जिसमें असमिया, उड़िया, उर्दू, कन्नड़, कश्मीरी, गुजराती, तमिल, तेलुगू, पंजाबी, बंगला, मराठी, मलयालम, संस्कृत तथा हिंदी प्रमुख थी। 1967 में सिंधी भाषा को आठवीं अनुसूची में शामिल किया गया तथा इसके पश्चात 1992 में कोंकणी, नेपाली तथा मणिपुरी भाषाओं को अनुसूची में शामिल किया गया। 2003 में बोडो, डोगरी, मैथिली तथा संथाली भाषाओं को भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करने से अब कुल 22 भाषाएँ अनुसूची में सम्मिलित हैं। यद्यपि मध्यकाल की तथा आदिकाल की प्रमुख साहित्यिक भाषाओं में अवधी, बुंदेली, भोजपुरी, छत्तीसगढ़ी, गढ़वाली, कुमाऊनी, मगही, राजस्थानी आदि भाषाएँ आज भी अनुसूची में सम्मिलित होने के लिए प्रयासरत और प्रतीक्षारत हैं।

यह सर्वमान्य है कि विश्व में कोई भी ऐसी भाषा नहीं होगी जिस पर किसी न किसी रूप में दूसरी भाषाओं का प्रभाव न

पड़ा हो, हिंदी पर भी हमें यह प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। हिंदी भाषा पर संस्कृत, पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश का प्रभाव तो उसकी विकास यात्रा में स्वाभाविक रूप से पड़ा ही है परंतु विदेशी भाषाओं के भारत आगमन से फ़ारसी, पश्तो, पुर्तगाली, फ्रांसीसी, अंग्रेजी, रूसी आदि भाषाओं का भी न्यूनाधिक प्रभाव पड़ा है ।

इसी के साथ भारत के अन्य प्रांतों की पंजाबी, गुजराती, मराठी, उड़िया, बंगला आदि वर्तमान भारतीय भाषाओं ने भी हिंदी के स्वरूप तथा विस्तार में अपना प्रभाव उत्पन्न किया है। मध्य काल के कबीर, मीरा, दादू, तुलसी, सूर आदि भक्त कवियों की हिंदी में यह प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता ही है। भाषाओं में ध्वनि, उपसर्ग, प्रत्यय, सर्वनाम, शब्द-समूह, रूप-समूह, वाक्य रचना, क्रिया पद, क्रिया- विशेषण, विराम चिन्ह, अन्वय, पदक्रम, मुहावरे, लोकोक्ति इत्यादि तत्त्वों का बड़ा महत्त्व होता है। इन तत्त्वों के अन्य भाषाओं से हिंदी में तथा हिंदी से अन्य भाषाओं में आने-जाने से हिन्दी और भारत की दूसरी भाषाएँ समृद्ध हुई हैं। फ़ारसी की क़, ख़, ग़, ज़, फ़ तथा अंग्रेजी की ऑ ध्वनियाँ आयातित हैं। हिंदी की श, ष, स ध्वनियाँ भी कुछ भाषाओं में उच्चारण भेद के साथ ही उपयोग में लाई जाती हैं।

हिंदी में अ, अन्, अधि, कु, नि आदि उपसर्ग प्रायः संस्कृत से लिए गए हैं किंतु बे (बेमतलब), बा (बाकायदा), ला (लाइलाज), हैड (हैडमास्टर), वाइस (वाइसराय) आदि उपसर्ग भी फ़ारसी या अंग्रेजी भाषाओं से हिंदी में आए हैं। इसी प्रकार हिंदी में प्रत्यय भी संस्कृत के अतिरिक्त फ़ारसी तथा अंग्रेजी से लिए हैं जैसे आना (घबराना), यत (बोरियत), दान (सिंगारदान), खोर (घूसखोर), बाज (बमबाज) इज्म (बुद्धिज्म, जैनिज्म) आदि। हाँ, यह सच्चाई है कि किसी भाषा पर दूसरी भाषाओं का प्रभाव सर्वाधिक शब्द समूह का पड़ता है, आसान, हज़ार, आदमी, फौज़, क़मरा, दीवार, औरत, स्कूल, हॉस्पिटल, बिल्डिंग, दरवाज़ा, आदि अन्यान्य भाषाओं के शब्दों का अत्यधिक प्रभाव हिंदी के भाषा रूप पर पड़ा है।

इसी प्रकार वाक्य-रचना, सर्वनाम तथा अन्य व्याकरणिक पहलुओं की दृष्टि से भी हिंदी भारतीय तथा भारतेतर भाषाओं से मिश्रित और समृद्ध हुई है, इसका यह भी एक कारण है कि भाषा वैज्ञानिकों ने दुनिया की लगभग 3000 भाषाओं की उत्पत्ति कुल बारह-तेरह भाषा परिवारों से ही मानी है। इसका अर्थ यह हुआ कि एक भाषा परिवार की अनेक भाषाओं में परस्पर ध्वनि, शब्द, शब्द रचना, वाक्य-रचना या रूप-रचना की दृष्टि से कुछ समानताएँ मिल सकती हैं।

हम कह सकते हैं की हमारे आधुनिक भारत की राजभाषा हिंदी का विकास अनेक चरणों को पार करने पर हुआ है, पर फिर भी यह आवश्यक है कि अंग्रेजी की तुलना में भारत की अन्य देशी भाषाओं के साथ हिंदी को प्रोत्साहन देना बहुत जरूरी है। विदेशी भाषा में शिक्षा पाने से हमारा स्वतंत्र चिंतन कुंठित होता है, इसलिए समूचे राष्ट्र के सांस्कृतिक अभ्युत्थान के लिए हमें अपनी हिन्दी और देश भाषाओं को समृद्ध करना अत्यावश्यक है।

जैसे द्रविड़ परिवार की दक्षिण भारतीय भाषाओं पर संस्कृत का अत्यधिक प्रभाव है। उनका शब्द भंडार तथा शब्द प्रयुक्ति संस्कृत से ही समृद्ध है। इसीलिए वे संस्कृतनिष्ठ हिंदी के सदैव समर्थक रहे हैं।

उत्तर-पूर्वी भारत की मणिपुरी, गारो, बोडो, नागा नेवारी आदि भाषाएँ चीनी अथवा एकाक्षरी परिवार की भाषाएँ हैं जो मंदारिन के बहुत करीब हैं। हिंदी भाषा के साथ अंग्रेजी, फ्रांसीसी, फ़ारसी, स्पेनिश, रूसी, संस्कृत, मराठी, गुजराती, बंगला, कश्मीरी आदि भाषाएँ भारोपीय परिवार की भाषाएँ हैं जिनका भौगोलिक क्षेत्र भारत तथा यूरोप है। भारोपीय परिवार क्षेत्रफल, जनसंख्या तथा भाषाओं की संख्या की दृष्टि से विश्व में सबसे बड़ा है। इसी में से भारोपीय शाखा की एक आधुनिक भाषा हिंदी है।

इस प्रकार विश्व की 3000 भाषाओं के 13 परिवारों में से सबसे बड़े भारोपीय परिवार के सप्तम वर्ग की भारतीय आर्य भाषाओं में आधुनिक कालीन एक महत्त्वपूर्ण भाषा हिंदी है जो वर्तमान में हमारे देश की राजभाषा है। यह हिंदी प्राचीन भारतीय भाषा संस्कृत तथा मध्यकालीन भारतीय भाषा पालि, फिर प्राकृत, उसके पश्चात अपभ्रंश की शौरसेनी रूप की उपभाषा पश्चिमी हिंदी का एक भेद है। मूलतः खड़ी बोली नाम का प्रयोग दो अर्थों में होता है, एक तो मानक हिंदी के लिए और दूसरा उस लोक बोली के लिए जो दिल्ली, मेरठ, बिजनौर, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मुरादाबाद, रामपुर तथा हरियाणा के कुछ भाग के आसपास बोली जाती है। लोक बोली के रूप में बोली जाने वाली खड़ी बोली का क्षेत्र पुराना कुरु जनपद है, इसी आधार पर राहुल सांकृत्यायन ने इस बोली को 'कौरवी' नाम दिया था। इस को आधार मानकर भाषाविद भोलानाथ तिवारी ने एक महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष दिया है कि 'अच्छा ही रहे यदि खड़ी बोली को मानक हिंदी कहा जाए और कौरवी इस बोली को।' लोक साहित्य की दृष्टि से खड़ी बोली बहुत संपन्न है और इसमें पवाड़ा नाटक, लोक कथा, लोक गीत आदि पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। खड़ी बोली का दूसरा रूप मानक हिंदी है जो आज हमारे देश की राजभाषा है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि हमारे आधुनिक भारत की राजभाषा हिंदी का विकास अनेक चरणों को पार करने पर हुआ है, पर फिर भी यह आवश्यक है कि अंग्रेजी की तुलना में भारत की अन्य देशी भाषाओं के साथ हिंदी को प्रोत्साहन देना बहुत जरूरी है। विदेशी भाषा में शिक्षा पाने से हमारा स्वतंत्र चिंतन कुंठित होता है, इसलिए समूचे राष्ट्र के सांस्कृतिक अभ्युत्थान के लिए हमें अपनी हिन्दी और देश भाषाओं को समृद्ध करना अत्यावश्यक है। ❑

राष्ट्रीय से अंतरराष्ट्रीय संपर्क भाषा के रूप में बढ़ती हिंदी

डॉ. सत्य प्रकाश पाल
सहायक आचार्य,
हिंदी विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी (उ.प्र.)

भाषा के माध्यम से मनुष्य न केवल अपनी भावनाओं की सरल, सहज, सक्षम और अर्थपूर्ण अभिव्यक्ति करता है बल्कि सर्जनात्मक गतिविधियों के लिए भी भाषा अत्यधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध होती है। भाषा ही वह अद्वितीय उपलब्धि है जो मनुष्य को अन्य प्राणियों से अधिक विशिष्ट, विवेकवान, सक्रिय और समर्थ बनाती है। इसलिए यह कहा जाता है कि भाषा ने मनुष्य को वास्तविक अर्थ में मनुष्य बनाया है। आज के समय में भाषा विहीन मनुष्य और मानव समाज की कल्पना करना भी भयावह प्रतीत होता है। परंतु भाषा की उपलब्धि मनुष्य के लिए बिल्कुल भी आसान नहीं थी। विकास की एक लंबी प्रक्रिया के साथ मनुष्य ने अपने अनुकूल भाषा कौशल विकसित किया। एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति और अनेक व्यक्तियों के बीच आपसी संपर्क निर्मित करने और भावनाओं के आदान-प्रदान के साथ साथ अभिव्यक्ति के विभिन्न स्वरूपों के लिए भाषा की आवश्यकता अनिवार्य है। लगभग 130 करोड़ की आबादी वाले भारत जैसे विशाल देश में विभिन्न भाषा-भाषी लोगों की पर्याप्त संख्या पाई जाती है। भारत आरंभ से ही समृद्ध संस्कृति की भूमि रही है। यहाँ अनेक बोली और भाषा पायी जाती हैं। 'कोस-कोस पर पानी बदले और तीन कोस पर बानी' जैसे लोक कथन भारत की भाषिक विशेषता जिसमें प्रत्येक तीन कोस की दूरी पर बानी अर्थात् बोली और भाषा के बदल जाने की विशेषता की ओर संकेत किया गया है, के आधार पर भारत में बोली और भाषा की चली आ रही समृद्ध परंपरा का परिचय प्राप्त होता है। भारत जैसे विशाल जनसंख्या और समृद्ध भाषिक विरासत वाले देश में किसी एक भाषा का ही प्रयोग होना अत्यंत मुश्किल और असंभव है। भारत में सैकड़ों बोली और भाषाओं का प्रयोग जनता द्वारा किया जाता है परंतु हिंदी एक ऐसी भाषा है जिसका प्रयोग भारत के प्रत्येक क्षेत्र में प्रत्येक समुदाय के लोग करते हैं। भारत के अधिकांश लोगों को हिंदी भाषा पढ़ने लिखने बोलने सुनने और समझने में सामान्यतया कोई विशेष परेशानी नहीं होती है। भारत के हर हिस्से में लोग हिंदी भाषा आसानी से बोलते और समझते हैं। भारत के लोग जब एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में देश के भीतर आवागमन करते हैं तो वे अपनी बात हिंदी में ही व्यक्त करते हैं और एक दूसरे के साथ संपर्क साधते हैं। दक्षिण भारत में जहाँ द्रविड़ जाति की भाषाओं का प्रयोग अधिक होता है वहाँ भी हिंदी भाषा मुख्य संपर्क भाषा के रूप में अपनी भूमिका का निर्वहन करती है। उत्तर-पूर्व के राज्यों में जहाँ उनकी अपनी भाषाएँ और विभिन्न बोलियाँ पाई जाती हैं वहाँ भी हिंदी भाषा ही प्रमुख संपर्क भाषा के रूप में कार्य करती है। दक्षिण और उत्तर पूर्व के राज्यों के अलावा शेष अतिरिक्त भारत के राज्यों और गुजरात राजस्थान और जम्मू कश्मीर में भी हिंदी भाषा ही प्रमुख संपर्क भाषा के रूप में दिखाई पड़ती है। इस तरह संपूर्ण भारत में हिंदी भाषा है सबसे बड़ी सबसे सरल सहज और कारगर ढंग से संपर्क भाषा के रूप में प्रयोग की जाती रही है और की जा रही है इसलिए यह निर्विवाद है कि हिंदी ही भारत की सबसे प्रमुख संपर्क भाषा है।

सम्पर्क भाषा वह भाषा होती है जो

किसी क्षेत्र, प्रदेश या देश के ऐसे लोगों के बीच पारस्परिक विचार-विनिमय के माध्यम का काम करे जो एक दूसरे की भाषा नहीं जानते। दूसरे शब्दों में विभिन्न भाषा-भाषी वर्गों के बीच सम्प्रेषण के लिए जिस भाषा का प्रयोग किया जाता है, वह सम्पर्क भाषा कहलाती है। 'सम्पर्क भाषा' की सामान्य परिभाषा यह है कि - 'एक भाषा-भाषी जिस भाषा के माध्यम से किसी दूसरी भाषा के बोलने वालों के साथ सम्पर्क स्थापित कर सके, उसे सम्पर्क भाषा कहते हैं।' भारत में 'हिंदी' बहुत पहले से ही सम्पर्क भाषा के रूप में रही है और इसीलिए यह बहुत पहले से 'राष्ट्रभाषा' कहलाती है क्योंकि हिंदी की सार्वदेशिकता सम्पूर्ण भारत के सामाजिक स्वरूप का प्रतिफल है। भारत की विशालता के अनुरूप ही राष्ट्रभाषा विकसित हुई है जिससे उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम कहीं भी सांस्कृतिक आदान-प्रदान की भाषा के रूप में हिंदी का ही अधिकतर प्रयोग होता है। इस प्रकार इन सांस्कृतिक परम्पराओं से हिंदी ही सार्वदेशिक भाषा के रूप में लोकप्रिय है। विशेषकर दक्षिण और उत्तर के सांस्कृतिक सम्बन्धों की दृढ़ शृंखला के रूप में हिंदी ही सशक्त भाषा बनीं।

वर्तमान समय में वैज्ञानिक-तकनीकी क्रांति के इस अति महत्त्वपूर्ण दौर में वैज्ञानिक-तकनीकी कर्मियों की संख्या की दृष्टि से भारत का दुनिया में तीसरा स्थान है। ये तकनीकी कर्मी विश्व के अलग-अलग देशों में काम करते हैं और हिंदी के प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इलेक्ट्रॉनिक संचार-माध्यम और कम्प्यूटर आदि के उपयोग में हिंदी ने धीरे-धीरे अपनी मजबूत जगह बना ली है। आज विश्व में मोबाइल और इंटरनेट उपभोक्ताओं की एक विशाल संख्या भारत में है। इससे एक तरफ इन माध्यमों से हिंदी का प्रसार हो रहा है, तो दूसरी तरफ हिंदी क्षेत्र में इलेक्ट्रोनिक यंत्रों का बाजार भी फैल रहा है। इससे हिंदी की अंतरराष्ट्रीय भूमिका मजबूत हो रही है। पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज बुश ने एक बार कहा था कि - यदि भारत को समझना है, तो हिंदी सीखो। वस्तुत: हिंदी हमारे चिंतन की, हमारे सपनों की, हमारे प्रतिरोध की भाषा बनकर हमारी सांस्कृतिक और राष्ट्रीय स्वायत्तता की रक्षा की भाषा बनकर हमें ताकत देती है। इसलिए आज दुनिया भर के लोग हिंदी सीखने और उसमें व्यवहार करने पर ध्यान दे रहे हैं। पूंजीवाद और भूमंडलीयकरण के इस दौर में जब खुले बाजार की व्यवस्था का बोलबाला है हिंदी भाषा राष्ट्रीय संपर्क भाषा की अपनी भूमिका से बढ़कर अंतरराष्ट्रीय संपर्क भाषा के रूप में अपनी भूमिका का निर्वाह करते हुए अपनी पहचान निर्मित कर रही है।

आज भारत की अर्थव्यवस्था अत्यंत सुदृढ और अग्रगामी है। एक बड़े अंतराल के बाद लंबे समय से केंद्र में एक स्थायी और पूर्ण बहुमत की सरकार है। इससे विभिन्न क्षेत्रों में भारत की साख में इजाफा हुआ है। 130 करोड़ की आबादी वाला देश दुनिया के लिए एक बहुत बड़े बाजार के रूप में अवसरों की अपार संभावनाएँ उपलब्ध करवाता है। राष्ट्रीय स्तर के साथ-साथ अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी विभिन्न क्षेत्रों में काम कर रहे विभिन्न संगठनों और लोगों को भारतीय बाजार में प्रवेश की महत्त्वाकांक्षा है। थोड़ी सी सरकारी नियत और जन जागरूकता से हिंदी अंतरराष्ट्रीय संपर्क भाषा के रूप में भी महत्त्वपूर्ण स्थिति प्राप्त कर सकती है। राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी की संपर्क भाषा के रूप में मजबूती का प्रमाण यह है कि जहाँ एक तरफ दक्षिण भारत के विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में बनी फिल्मों को हिंदी भाषा में डब करके चलाया जाता है और वह फिल्में कई सौ करोड़ रुपये का व्यापार करती है और मुनाफा कमाती है। वहीं दूसरी तरफ बहुत से हिंदी भाषी क्षेत्रों के राजनेता दक्षिण भारत में जाकर शुद्ध हिंदी में भाषण देते हैं। दक्षिण भारत के भी बहुत से कलाकार हिंदी क्षेत्रों में आकर हिंदी बोलकर लोगों के साथ अपना संपर्क बढ़ाते हैं। हाल के कुछ वर्षों में विदेशी पर्यटकों के रूप में भारत में पर्याप्त मात्रा में विदेशी आते हैं जिन्हें भारत के बाजारों, रेस्त्रां, घाट और पार्कों और सड़कों पर चलती हुए हिंदी में बोलते हुए संपर्क करते देखा जा सकता है। आज आवश्यकता है कि राष्ट्रीय संपर्क भाषा के साथ-साथ अंतरराष्ट्रीय संपर्क भाषा के रूप में भी हिंदी की बढ़ती हुई भूमिका की शिनाख्त की जाए और उसे बढ़ावा भी दिया जाए। नि:संदेह इसके लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति अत्यंत आवश्यक है। तथापि भारत की जनता भी अपने स्तर से हिंदी की इस बदलती हुई भूमिका को अध्यापक और समृद्ध कर सकते हैं। बदलते समय संदर्भों के साथ सोशल मीडिया के विकास और विस्तार ने दुनिया को मुट्ठी में बंद एक मोबाइल में कैद कर दिया है। इन सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के उपयोग के दौरान भी हिंदी भाषा के प्रयोग के माध्यम से संपर्क भाषा के रूप में हिंदी की बदलती भूमिका को और समृद्ध किया जा रहा है। इन विशेषताओं के कारण अब हिंदी भाषा राष्ट्रीय से अंतरराष्ट्रीय संपर्क भाषा के रूप में बढ़ रही है। यह स्थिति प्रत्येक हिंदी प्रेमी भारतवासी को गौरवान्वित करने वाला है। ❑

पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज बुश ने एक बार कहा था कि - यदि भारत को समझना है, तो हिंदी सीखो। वस्तुत: हिंदी हमारे चिंतन की, हमारे सपनों की, हमारे प्रतिरोध की भाषा बनकर हमारी सांस्कृतिक और राष्ट्रीय स्वायत्तता की रक्षा की भाषा बनकर हमें ताकत देती है। इसलिए आज दुनिया भर के लोग हिंदी सीखने और उसमें व्यवहार करने पर ध्यान दे रहे हैं। पूंजीवाद और भूमंडलीयकरण के इस दौर में जब खुले बाजार की व्यवस्था का बोलबाला है हिंदी भाषा राष्ट्रीय संपर्क भाषा की अपनी भूमिका से बढ़कर अंतरराष्ट्रीय संपर्क भाषा के रूप में अपनी भूमिका का निर्वाह करते हुए अपनी पहचान निर्मित कर रही है।

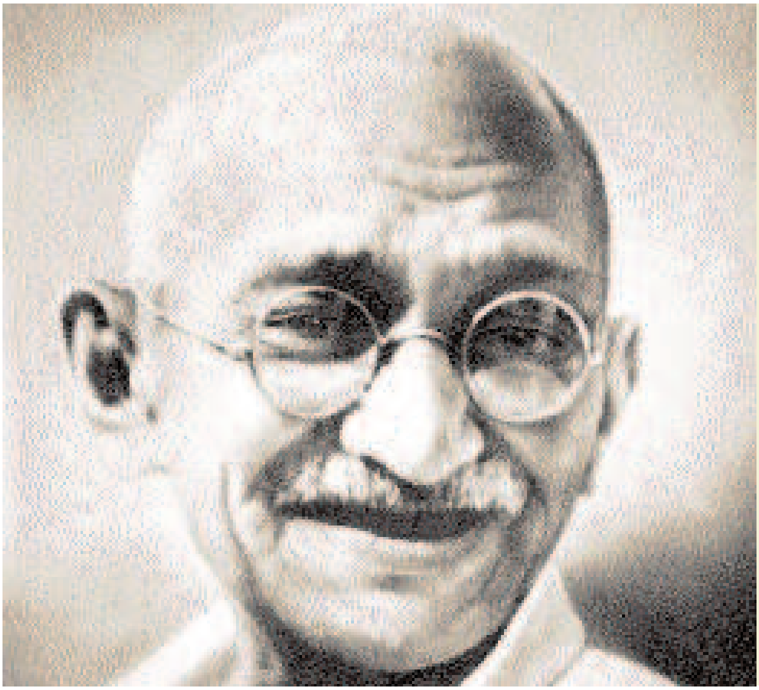

महात्मा गांधी का मत था कि हिंदी ही राष्ट्र में एकता एवं संपर्क का प्रमुख माध्यम है। भारतीय संस्कृति की समृद्धता एवं सुदृढ़ता इसी पर निर्भर है। वे कहते हैं कि- ''यदि हिंदी अंग्रेजी का स्थान ले ले तो कम से कम मुझे तो अच्छा ही लगेगा। अंग्रेजी अंतरराष्ट्रीय भाषा है, लेकिन वह राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती। अगर हिंदुस्तान को हमें सचमुच एक राष्ट्र बनाना है तो चाहे कोई माने या न माने राष्ट्रभाषा तो हिंदी ही बन सकती है।''

राष्ट्रीय और सांस्कृतिक एकता में सहायक हिंदी

डॉ. नवीन नंदवाना

सह आचार्य,
हिंदी विभाग, मोहनलाल
सुखाड़िया विश्वविद्यालय,
उदयपुर (राज.)

भाषा किसी भी देश की संजीवनी होती है। वह उस देश की संस्कृति को अनवरत रखने और उसे पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे पहुँचाने में अपनी महती भूमिका निभाती है। एक सामाजिक प्राणी होने के नाते मनुष्य अपनी भावनाओं के प्रकटीकरण के लिए भाषा का सहारा लेता है। हिंदी भाषा ने अपने आरंभ से ही जनमन की भाषा के स्वरूप को अपनाकर अपनी बात कही, जिससे इस भाषा और इसके साहित्य ने राष्ट्रीय-सांस्कृतिक एक्य की स्थापना में अपनी महती भूमिका निभाई।

अपनी सभ्यता एवं संस्कृति व्यक्ति की अपनी पूंजी होती है। व्यक्ति सभ्यता एवं संस्कृति से जुड़े विविध विषयों को अपने राष्ट्र की भाषा में ही अधिक सुस्पष्ट अभिव्यक्ति दे सकता है, किसी अन्य राष्ट्र से उधार ली गई भाषा में नहीं। राष्ट्रभाषा को परिभाषित करते हुए डॉ. कर्ण सिंह लिखते हैं कि- ''उपक्षेत्रों, क्षेत्रों तथा प्रांतों में अपनी-अपनी बोलियों तथा भाषाओं का प्रयोग करते रहने पर भी राष्ट्र की एकता को ध्यान में रखते हुए, सभी राष्ट्रवासी जिस भाषा का प्रयोग सार्वजनिक कार्यों के लिए करते हैं, उसे 'राष्ट्र भाषा' कहा जाता है।'' हमारे राष्ट्र की एकता, अखंडता एवं संस्कृति की संवाहिका हिंदी भाषा रही है। सदियों से यह भाषा हमारी रग-रग में शुद्ध रक्त की भाँति प्रवाहमान है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी लिखते हैं- ''कम से कम भारतवर्ष के आधे हिस्से की सहस्त्रवर्ष-व्यापी आशा-आकांक्षाओं का मूर्तिमान प्रतीक यह हिंदी साहित्य अपने आप में एक ऐसी शक्तिशाली वस्तु है कि इसकी उपेक्षा भारतीय विचारधारा को समझने में घातक सिद्ध होगी।''

हिंदी ही वह एकमात्र भाषा है जो संपूर्ण राष्ट्र में कम या अधिक रूप से समझी, जानी एवं बोली जाती है। विश्व की समस्त संस्कृतियों में हमारी संस्कृति अति प्राचीन एवं सिरमौर है। प्रसिद्ध भाषा विज्ञानी डॉ. हरदेव बाहरी लिखते हैं- ''दक्षिण के आचार्यों ने हिंदी के आदिकाल से ही अनुभव किया था कि इस भाषा के माध्यम से वे सारे देश के जन-जन तक अपना संदेश पहुँचा सकते हैं। वल्लभाचार्य, विट्ठल, रामानुज, रामानंद आदि इसकी राष्ट्रीय महत्ता को समझकर इसे अपने व्यवहार में लाते रहे। दक्षिण में राष्ट्रकूटों एवं यादवों का जब राज्य स्थापित हुआ, तब वहाँ हिंदी का प्रचार हआ। विजयनगरम् दरबार में हिंदी को विशिष्ट स्थान प्राप्त था।

मछलीपट्टम के नादेल्ल पुरुषोत्तम कवि ने 32 हिंदी नाटकों की रचना की थी। इसके अलावा और भी बहुत से नाटककार और कवि हुए हैं। यह कथन हिंदी की सार्वदेशिकता सिद्ध करता है।

कई लोग हिंदी को केवल उत्तर भारत की भाषा मानते हैं। वे लोग यह भूल जाते हैं कि मुस्लिम साम्राज्य के दक्षिण भारत में साम्राज्य विस्तार के साथ उन उत्तर भारतीय सेनाओं एवं अन्य लोगों के साथ हिंदी भाषा भी दक्षिण भारत में पहुँची। बीदर, बीजापुर, अहमदनगर एवं गोलकुंडा आदि राज्य दक्खिनी हिंदी के प्रधान केंद्र बने। बन्दानवाज, शाह मिराजी, मुल्ला वजही आदि अनेक ख्यातनाम रचनाकार दक्षिण भारत में हुए हैं जिन्होंने हिंदी के लिए उद्योग किया है।

हिंदी का प्रथम पत्र 'उदन्त मार्तण्ड' (1826) कलकत्ता से निकला। इसके बाद वहाँ से और भी कई पत्र निकले। कलकत्ता उस समय का प्रमुख केंद्र था। व्यापारी, मजदूरों एवं व्यवसाय से जुड़े अन्य लोगों की भी भाषा हिंदी रही है। गुजराती, ब्रजभाषा के निकटस्थ लगती है। पंजाब के सिख गुरुओं ने भी हिंदी मिश्रित भाषा को अपनाया था। महाराष्ट्र में संत नामदेव, ज्ञानदेव एवं तुकाराम ने जन जागरण तथा धार्मिक एवं सामाजिक सुधार का कार्य इस भाषा के सहयोग से भी किया है। केरल के राजा रवि वर्मा ने भी हिंदी गीत लिखे। यह सब कुछ इस बात का प्रमाण है कि भारत का कोई भी प्रांत हिंदी की पहुँच से बचा नहीं। कम या अधिक मात्रा में यह भाषा भारत के प्रत्येक प्रांत तक व्यवहृत होती थी। इतना विराट वैभव और किसी भाषा का दिखाई नहीं पड़ता है।

अंग्रेजी शासनकाल के दौरान भारत की भाषा हिंदी थी इस बात का प्रमाण एच.टी. कोलबुक के इस मत से भी मिलता है- ''जिस भाषा का व्यवहार भारत के प्रत्येक प्रांत के लोग करते हैं, जो पढ़े-लिखे तथा अनपढ़ दोनों की साधारण बोलचाल की भाषा है और जिसको प्रत्येक गाँव में थोड़े-बहुत लोग अवश्य समझ लेते हैं, उसी का यथार्थ नाम हिंदी है।'' इसी हिंदी भाषा ने राष्ट्रीय जागरण एवं स्वतंत्रता संग्राम में सभी भारतीयों को एक मंच पर लाने में सहायता की। राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद सरस्वती, केशवचद सेन एवं ऐनीबेसेंट ने भी अपने सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार एवं समाज सुधार हेतु इसी भाषा को अपनाया। इस प्रकार हमारे देश में हिंदी ही एकमात्र वह भाषा है जो चिरकाल से हमारी सहयोगिनी है। वह अनंत काल से हमारे लिए पावन गंगा की भाँति कल्याणदायी सिद्ध हो रही है। हमारी सभ्यता, संस्कृति के बहुमूल्य तत्त्व हम हमारी भाषा में ही पीढ़ी दर पीढ़ी आगे पहुँचा सकते हैं। उधार ली गई विदेशी भाषाओं से हम अपना काम चलाऊ कार्य कर सकते हैं किंतु जिन कारणों से कोई राष्ट्र वैश्विक पटल पर अपनी पहचान स्थापित कर सकता है, वह उसकी अपनी भाषा एवं संस्कृति में ही निहित होते हैं।

हमारे राष्ट्र का बहुजन हिंदी भाषी है और तो और संपर्क के लिए भी हम हिंदी भाषा का प्रयोग करते हैं। हमारे विचारकों ने भी इसी भाषा की महत्ता स्वीकारी है। धर्मवीर भारती अपने निबंध 'सत्याग्रह की अंग्रेजी क्या है?' के माध्यम से लिखते हैं कि भारतीय सभ्यता, संस्कृति के द्योतक कई शब्द ऐसे हैं जिनकी अभिव्यक्ति हमारी अपनी भाषा हिंदी में ही संभव है। वे लिखते हैं कि- ''हमारे देश की आत्मा जिस लंबे और बहुपक्षी इतिहास, विराट समन्वय और आध्यात्मिक खोज को अपने में समाहित किए हुए है, उसकी विविध अनुभूतियों की अभिव्यक्ति उन्हीं भाषाओं के शब्दों से ही हो सकती है जो हमारे देश की है। ...विदेश से उधार लिए गए बहुत से सदंर्भों में झूठे और यथेष्ट साबित होंगे।' भारतीय भक्तों एवं संतों ने अपनी दिव्य वाणियों का प्रसार अपनी भाषा में ही किया था। अपनी भाषा में रचे उनके साहित्य से ही वह युग स्वर्णयुग की संज्ञा पा गया। भक्ति, दर्शन एवं सामाजिक सरोकार विषयक उनकी वाणियाँ आज भी प्रासंगिक हैं।

महात्मा गांधी का मत था कि हिंदी ही राष्ट्र में एकता एवं संपर्क का प्रमुख माध्यम है। भारतीय संस्कृति की समृद्धता एवं सुदृढ़ता इसी पर निर्भर है। वे कहते हैं कि- ''यदि हिंदी अंग्रेजी का स्थान ले ले तो कम से कम मुझे तो अच्छा ही लगेगा। अंग्रेजी अंतरराष्ट्रीय भाषा है, लेकिन वह राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती। अगर हिंदुस्तान को हमें सचमुच एक राष्ट्र बनाना है तो चाहे कोई माने या न माने राष्ट्रभाषा तो हिंदी ही बन सकती है।''

आज हिंदी ने अपना स्वरूप बदला है। हमारी भाषा ने गतिशीलता को अपनाया है। समय-समय पर संपर्क में आए नए लोगों एवं उनके नवीन प्रभाव को आत्मसात किया। आज हिंदी ने वैश्विक पटल पर अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। एक बड़ा बाजार भारत का है जहाँ उत्पादन एवं उपभोग की अपार संभावनाएँ वैश्विक परिदृश्य पर स्पष्ट हैं। अतः विदेशी कंपनियाँ भी हिंदी एवं हिन्दुस्तान की ओर झाँक रही है। डॉ. हुकुमचन्द्र राजपाल लिखते हैं कि ''आवश्यकता का समय जब भी दस्तक देता है तो भी कुछ अनुकूल होने लगता है। आज विश्व स्तर पर हिंदी की आवश्यकता है। अब मात्र यह एक भाषा नहीं रह गई है, इसे बाजार मिल चुका है- इसने भी समयानुसार अपना तेवर, मिजाज और स्वरूप बदल लिया है।'' यही समयानुसार परिवर्तन की शक्ति हिंदी की प्राणदायिनी शक्ति है। हिंदी में असीम संभावनाएँ विद्यमान हैं। मीडिया के साथ मिलकर आज हिंदी ने श्रेष्ठता को छुआ है। आज नित-प्रति हिंदी पत्र पत्रिकाओं की संख्या बढ़ रही है। विश्व के कई विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्यापन तथा प्रिंट एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में एक बड़ा अनुपात हिंदी का है। यह सभी कुछ इस बात को दर्शाता है कि हिंदी अब केवल कुछ भारतीयों के हृदय तक ही नहीं रही, वह विश्व हृदय निवासिनी हो चुकी है। ❑

आज के परिवेश में हिंदी

डॉ. विवेकानन्द उपाध्याय

सहायक आचार्य, हिन्दी,
एमएमवी,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी (उ.प्र.)

आज के परिवेश में हिंदी भारत की संपर्क भाषा, राजभाषा, राष्ट्रभाषा और जन भाषा बन चुकी है। इतना ही नहीं वह एक अंतरराष्ट्रीय भाषा का भी स्थान रखती है। बोलने वालों की संख्या की दृष्टि से हिंदी कुछ लोगों के अनुसार दुनिया की दूसरे और कुछ के अनुसार तीसरे नंबर की भाषा है। भाषा के रूप में हिंदी का इतिहास लगभग 1000 वर्ष पुराना है। अमेरिकी संस्कृत विद्वान प्रोफेसर शेल्डन पोलक के अनुसार भारत की पिछली सहस्राब्दी को वर्नाक्युलर मिलेनियम अर्थात् देशी भाषाओं की सहस्राब्दी कहा जा सकता है। यह समय भारतीय भाषाओं के विकास तथा उनमें साहित्य के सृजन का अद्भुत कालखंड है। इस युग में ही हिंदी की विभिन्न बोलियाँ जैसे खड़ी बोली, ब्रज, अवधी, भोजपुरी, राजस्थानी, पहाड़ी तथा बांग्ला, उड़िया, मराठी, गुजराती, असमिया, सिंधी, पंजाबी और मलयालम आदि भाषाएँ विकसित हुईं। इनमें विपुल परिमाण में साहित्य सृजित हुआ और अखिल भारतीय लोक जागरण का भक्ति आंदोलन लगभग सभी भारतीय भाषाओं में संपन्न हुआ। सल्तनत काल में सरकारी कामकाज तथा मुगलकाल में दरबार की भाषा हिन्दी ही थी। पहली बार अकबर के समय सरकारी कामकाज के लिए फ़ारसी को अनिवार्य बनाया गया। मुहम्मद तुगलत की राजधानी परिवर्तन की योजना से हिंदी दक्षिण भारत पहुँची। इस प्रकार हिंदी मध्य काल से ही लगभग संपूर्ण भारत की संपर्क भाषा के रूप में विकसित हुई। भारतीय नवजागरण के महत्त्वपूर्ण सूत्रधार स्वामी दयानंद सरस्वती को- जो मूलत: गुजराती थे, बंगाल के केशव चंद्र सेन ने उनकी पुस्तक 'सत्यार्थ प्रकाश' हिंदी में लिखने की प्रेरणा दी। इतना ही नहीं स्वतंत्रता आंदोलन की भाषा भी हिंदी हुई। हिंदी नवजागरण के अग्रदूत भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने हिंदी गद्य के विकास में महत्त्वपूर्ण कार्य किया। छायावादी कवियों ने हिंदी कविता आधुनिक युग में समृद्ध किया। आधुनिक युग में हिंदी के सामने मुख्यत: चार समस्याएँ थीं।

उर्दू का वर्चस्व और हिंदी की उपेक्षा

पहली समस्या यह थी कि उर्दू को राजभाषा का दर्जा प्राप्त था और हिंदी को यह अधिकार नहीं था। सरकारी नौकरियों और न्यायालयों में हिंदी को स्थान नहीं था। इसलिए पहला आंदोलन हिंदी को सरकारी कामकाज की भाषा का दर्जा दिलाने का था। इसी क्रम में हिंदी भारत के उभरते हुए राष्ट्रीय आंदोलन की भाषा बन गई क्योंकि इसके पूर्व वह हिंदी के सांस्कृतिक पुनर्जागरण की भाषा बन चुकी थी। इसलिए हिंदी स्वभावत: जनभाषा होने के नाते राष्ट्रभाषा के पद पर सहजता से आसीन हो गई। हिंदी को राष्ट्रभाषा का दर्जा किसी सरकार ने नहीं दिया था बल्कि देश की जनता ने दिया था। बाजार तब हिंदी का बड़ा था। प्रेमचंद जैसे लेखक उर्दू

से हिंदी की तरफ 1915 ई. के आसपास आए। उनका आगमन हिन्दी के बढ़ते बाजार के कारण ही हुआ। आज भी हिंदी बाजार की शक्ति से ही बढ़ रही थी।

हिंदी में साहित्य का अभाव

हिंदी की दूसरी समस्या यह थी कि हिंदी में साहित्य का अभाव था। भारतेंदु युग में खड़ी बोली में गद्य का सृजन तो हुआ परंतु कविता की भाषा ब्रज भाषा बनी रही। यह स्थिति बीसवीं सदी के प्रारंभिक दशकों तक जारी रही। छायावादी कवियों ने सबसे बड़ा कार्य यह किया कि उन्होंने कविता में भी खड़ी बोली को स्थापित कर दिया। इसके लिए प्रसाद, निराला, पंत और महादेवी वर्मा ने रचनात्मक और आलोचनात्मक दोनों ही प्रकार के प्रयास किए।

उच्च शिक्षा की भाषा के रूप में अंग्रेजी का वर्चस्व

हिंदी की तीसरी समस्या यह थी कि शिक्षा की भाषा अंग्रेजों ने अंग्रेजी को बना रखा था। यह स्थिति उच्च शिक्षा में बहुत भयानक थी। हिंदी को सरकारी संरक्षण और सहयोग स्वतंत्रता के बाद ही प्राप्त होना शुरू हुआ। लेकिन अंग्रेजी के समर्थकों ने हिंदी का मार्ग रोकने के लिए हिंदी को भारत की राजभाषा के रूप में मान्यता तो दी पर साथ ही अंग्रेजी को बनाए और चलाए रखने की व्यवस्था भी कर दी। स्वतंत्रता के पहले ही हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा बन चुकी थी। स्वतंत्रता के बाद वह राजभाषा बन गई। संपर्क भाषा तो वह सदियों से बनी ही हुई थी। इस प्रकार जो आधुनिक परिवेश हिंदी को स्वतंत्रता के बाद प्राप्त हुआ उसमें हिंदी को एक बेहतर अवसर प्राप्त हुआ। शिक्षा में हिंदी को स्वीकृति तो मिली। परंतु बहुत बाद तक संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में हिंदी को कोई स्थान नहीं मिला और परीक्षाओं की भाषा अंग्रेजी ही बनी रही। नौकरशाही की भाषा अंग्रेजी होने के कारण हिंदी का बहुत अहित हुआ। दौलत सिंह कोठारी ने संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में हिंदी के लिए मार्ग निकाला जिसका परिणाम यह हुआ है कि हिंदी माध्यम के विद्यार्थी संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में सफलता प्राप्त करने लगे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के पहले भारतीय भाषाओं में तकनीकी शिक्षा तथा प्रबंधन की शिक्षा की व्यवस्था हिंदी और भारतीय भाषाओं में नहीं थी। परंतु अब हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में तकनीकी शिक्षा की भी व्यवस्था सुलभ हो रही है। अखिल भारतीय तकनीकि शिक्षा परिषद् ने तकनीकि शिक्षा हिंदी में दिए जाने का मार्ग प्रशस्त कर दिया है।

सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों की भाषा अंग्रेजी होना

अभी भी एक मोर्चे पर हिंदी की लड़ाई बाकी है और वह मोर्चा है न्याय का। अभी भी सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों की भाषा आधिकारिक रूप से अंग्रेजी बनी हुई है। पर भारतीय भाषा अभियान के सत्प्रयासों से जनता की भाषा में जनता को न्याय आंदोलन के कुछ सुखद परिणाम सामने आए हैं। इसके परिणाम स्वरूप कुछ उच्च न्यायालयों ने हिंदी में याचिकाएँ प्रस्तुत करने और न्यायालय में बहस की सुविधा मिल गयी है। परंतु अभी भी लंबी लड़ाई बाकी है। संविधान की मूल भाषा अभी भी अंग्रेजी ही स्वीकृत है तथा उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों के अंग्रेजी संस्करण ही अभी भी प्रामाणिक माने जाते हैं। समस्या यह है कि उच्च न्यायालयों तथा सर्वोच्च न्यायालय में न्यायाधीशों की अर्हता में कहीं से भी अंग्रेजी की अनिवार्य योग्यता नहीं रखी गयी है पर निर्णय अंग्रेजी के ही प्रामाणिक माने जाने के कारण अंग्रेजी ना जानने वाले व्यक्ति के लिए न्यायाधीश के रूप में उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय में नियुक्ति का मार्ग अभी तक बाधित है। इस गुप्त, अप्रकट तथा अन्यायपूर्ण भेदभाव को समाप्त किए जाने की आवश्यकता है। एक समय ऐसा था जब इलाहाबाद विश्वविद्यालय में हिंदी के शोध पत्र भी अंग्रेजी में प्रस्तुत किए जाते थे। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में सामाजिक विज्ञान और अन्य विषय की पढ़ाई तथा शोध की भाषा अंग्रेजी ही थी। हिंदी में लिखे गए शोध स्वीकृत नहीं होते थे। डॉ. वेद प्रताप वैदिक ने अंतरराष्ट्रीय राजनीति में हिंदी में पहली बार अपना शोध पत्र प्रस्तुत किया जिसके लिए उन्हें लंबी लड़ाई लड़नी पड़ी। परंतु आज वहाँ भी हिंदी के लिए अच्छा वातावरण निर्मित हो गया है।

हिंदी सिनेमा ने हिंदी के विकास में अतुलनीय योगदान किया और मनोरंजन उद्योग आदि के सत्प्रयासों से हिंदी भारत ही नहीं बल्कि भारत के बाहर भी हिंदीतर क्षेत्रों में व्यापक रूप से फैल गई। प्रवासी हिंदी नागरिकों ने हिंदी को हिंदीतर क्षेत्रों में फैलाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। चाहे वह पूर्वोत्तर भारत हो या दक्षिण भारत अथवा भारत के बाहर के देश। हिंदी बोलने वाले कच्छ से लेकर ईटानगर तक और कश्मीर से लेकर अंडमान तक सर्वत्र मिल जाएंगे। विदेशों में सिंगापुर, दुबई मॉरीशस इत्यादि स्थानों पर हिंदी में काम करने पर कोई असुविधा नहीं होती। दुनिया के लगभग 150 से अधिक विश्वविद्यालयों में हिंदी आज पढ़ाई जा रही है। अमेरिका के हार्वर्ड, येल, कैलिफोर्निया, कोलंबिया, टैक्सास जैसे विश्वविद्यालयों में हिंदी की पढ़ाई हो रही है और बड़ी संख्या में शिक्षक हिंदी शिक्षण कार्य कर रहे हैं। इसी तरह स्कूल ऑफ ओरिएंटल एंड अफ्रीकन स्टडीज, लंदन तथा बुल्गारिया की राजधानी सोफिया हिंदी की पढ़ाई का बहुत अच्छा केन्द्र है। रूस में हिंदी अध्ययन-अध्यापन की एक अच्छी परंपरा बनी हुई है। हिंदी का प्रवासी साहित्य भी बहुत समृद्ध है। भारत के बाहर भारतीय मूल के लेखक विभिन्न देशों जैसे मारीशस, सूरीनाम, दक्षिण अफ्रीका तथा फिजी इत्यादि देशों में

रहकर हिंदी साहित्य को समृद्ध कर रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ ने हिंदी को हाल ही में एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। इस साल पहली बार प्रस्ताव में हिंदी भाषा को भी शामिल किया गया है, जिसमें बांग्ला और उर्दू का भी जिक्र है। भारत 2018 से संयुक्त राष्ट्र के वैश्विक संचार विभाग के साथ साझेदारी कर रहा है। हिंदी को बढ़ावा देने के लिए 2018 में हिंदी @UN परियोजना शुरू की गई थी, जिसका लक्ष्य हिंदी भाषा में संयुक्त राष्ट्र की सार्वजनिक पहुँच को बढ़ाना और दुनिया भर में हिंदी बोलने वाले लोगों को ज्यादा से ज्यादा सामग्री देना था।

अटल बिहारी वाजपेई जी से लेकर प्रधानमंत्री मोदी जी ने हिंदी में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी बात रखीं। इससे हिंदी का अंतरराष्ट्रीय परिवेश समृद्ध हुआ। कुल मिलाकर आधुनिक भारत के इतिहास में जितनी अच्छी स्थिति हिंदी की दृष्टि से आज है वैसी स्थिति इसके पहले कभी नहीं थी। सबसे ज्यादा नौकरियाँ तथा रोजगार संपूर्ण भारत ही नहीं बल्कि विदेशों में भी देने का कार्य आज हिंदी कर रही है। विज्ञापन, मनोरंजन, व्यापार साहित्य, अनुवाद तथा प्रशासनिक क्षेत्रों में हिंदी में रोजगार की विपुल संभावनाएँ हैं। कम्प्यूटर पर हिंदी में कार्य करना आसान हो गया है तथा सोसल मीडिया पर हिंदी की भरमार दिखायी दे रही है। अकेले शिक्षा क्षेत्र में प्राथमिक विद्यालय से लेकर विश्वविद्यालयों तक हिंदी शिक्षण के सरकारी तथा निजी दोनों ही क्षेत्रों में प्रचुर अवसर हैं। हिंदी साहित्य के लेखन का दायरा भी बहुत विस्तृत हुआ है। आज जितनी पत्र-पत्रिकाएँ निकल रही है उतनी पत्र-पत्रिकाएँ कभी नहीं निकल रही थीं। एक समय था जब देश के बड़े अखबारों में हिंदी के अखबारों की गिनती नहीं होती थी। परंतु आज देश के 10 बड़े अखबार अगर देखे जाएँ तो उनमें ज्यादातर हिंदी के हैं। हिन्दुस्तान, दैनिक जागरण और दैनिक भास्कर जैसे अखबार लगातार अपनी प्रसार संख्या को बनाए हुए हैं। कुल प्रकाशनों की दृष्टि से देखें तो आर.एन.आई. की सूचना के अनुसार वर्ष 2017-18 में प्रकाशनों के प्रसार की कुल संख्या : 43,00,66,629

हिंदी प्रकाशन : 19,56,21,990

अंग्रेजी प्रकाशन : 5,34,53,564

उर्दू प्रकाशन : 2,52,89,731

विभिन्न क्षेत्रों में हिंदी में काम करने वाले दक्ष लोगों की संख्या बढ़ रही है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में अंग्रेजी में चलने वाले सभी समाचार समूहों ने देर सवेर अपने हिंदी चैनल शुरू किए हैं और वे अंग्रेजी की तुलना में बेहतर काम कर रहे हैं। इतना ही नहीं ऑनलाइन समाचार पोर्टल भी हिंदी में बड़ी संख्या में काम कर रहे हैं। हिंदी के इस विकास और विस्तार ने भारतीय समाज को लोकतांत्रिक बनाने तथा उसमें उपेक्षित पड़े लोगों को अपनी बात कहने का एक अवसर प्रदान किया। सत्ता और संपत्ति का जो व्याकरण अंग्रेजी में निर्मित हुआ था उस व्याकरण का देर से ही सही पर हिंदीकरण हो रहा है। हिंदी भारतीय भाषाओं की प्रतिनिधि भाषा है और अन्यान्य भारतीय भाषाओं से उसका बहनापा है। गृह मंत्री अमित शाह ने बहुत महत्त्वपूर्ण सुझाव दिया कि विभिन्न भारतीय भाषाओं के राज्यों को चाहिए कि वे आपस में संपर्क और संवाद अंग्रेजी की बजाय हिंदी में करें जिसका विरोध अंग्रजी परस्तों ने किया। भारतेंदु हरिश्चन्द्र की पंक्ति निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल आज भी एक सत्य है और आर्थिक तथा सांस्कृतिक प्रकार के दारिद्र्य और दुख से निवृत्ति का एकमात्र मार्ग है। भारतीय भाषाओं में ज्ञान के सृजन की दृष्टि से मशीनी अनुवाद ने बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मशीनी अनुवाद की सहायता से दूसरी भाषाओं में रची गई अच्छी पुस्तकों को हिंदी में भी सहजता से उपलब्ध किया जा सकता है। इसके लिए शिक्षकों को व्यक्तिगत तथा हिंदी के विभागों को सामूहिक रूप से समय बद्ध लक्ष्य निर्धारित कर दृढ़ संकल्प के साथ अगले 5-10 वर्ष तक लगातार कार्य करना होगा। देश में 47 केंद्रीय और 800 राज्य विश्वविद्यालय हैं। इन लगभग सब में हिंदी पढ़ाई जाती है। इसलिए केवल विश्वविद्यालय स्तर पर ही हिंदी शिक्षकों की संख्या बहुत अच्छी है। कुल हिंदी शिक्षकों के 10 प्रतिशत शिक्षक भी अगर संकल्प पूर्वक कार्य करें तो हिंदी में उच्च शिक्षा के संदर्भ ग्रंथ तथा पाठ्य पुस्तकें तैयार हो सकती हैं। कुल मिलाकर आज परिस्थिति, परिवेश, अवसर तथा सरकारी संरक्षण सब कुछ हिंदी के लिए सर्वाधिक अनुकूल है। आवश्यकता है कि इस सुअवसर का पूर्ण लाभ उठाया जाए। हिंदी का भला कोई दूसरा नहीं करेगा। यह कार्य प्रथमतः और अंततः हिंदी के बुद्धिजीवियों का ही है। ❑

भाषा के रूप में हिंदी का इतिहास लगभग 1000 वर्ष पुराना है। अमेरिकी संस्कृत विद्वान प्रोफेसर शेल्डन पोलक के अनुसार भारत की पिछली सहस्राब्दी को वर्नाक्युलर मिलेनियम अर्थात् देशी भाषाओं की सहस्राब्दी कहा जा सकता है। यह समय भारतीय भाषाओं के विकास तथा उनमें साहित्य के सृजन का अद्भुत कालखंड है। इस युग में ही हिंदी की विभिन्न बोलियाँ जैसे खड़ी बोली, ब्रज, अवधी, भोजपुरी, राजस्थानी, पहाड़ी तथा बांग्ला, उड़िया, मराठी, गुजराती, असमिया, सिंधी, पंजाबी और मलयालम आदि भाषाएँ विकसित हुईं। इनमें विपुल परिमाण में साहित्य सृजित हुआ और अखिल भारतीय लोक जागरण का भक्ति आंदोलन लगभग सभी भारतीय भाषाओं में संपन्न हुआ। सल्तनत काल में सरकारी कामकाज तथा मुगलकाल में दरबार की भाषा हिन्दी ही थी।

हिंदी : भारत की अस्मिता और राष्ट्रीय एकता

प्रो. आनन्द प्रकाश त्रिपाठी

हिंदी विभाग,
अध्यक्ष संस्कृत विभाग,
डाक्टर हरीसिंह गौर
विश्वविद्यालय

हिंदी के संदर्भ में भारत की अस्मिता और राष्ट्रीय एकता का विचार हमें भारत की स्वतंत्रता के अमृत महोत्सव के अवसर पर आत्ममंथन के लिए उत्प्रेरित कर रहा है। यद्यपि इस विषय पर चर्चा कोई नई बात नहीं है , किंतु आज इक्कीसवीं सदी में हिंदी के मुद्दे पर पुन: नये सिरे से विचार करने की जरूरत महसूस हो रही है। हम बखूबी जानते हैं कि भाषा किसी भी समाज की अस्मिता और एकता का अपरिहार्य अंग है। लेकिन इस बात को हम राजनीतिक मंच पर लगातार एक तनाव का मुद्दा बनाये हुए हैं। एक सवाल के रूप में यह विचार आरंभिक दौर से ही हमारे मन को निरंतर उद्वेलित करता रहा है कि आखिर कब भारतीय जनमानस को एकसूत्रता में आबद्ध करने वाली हमारी हिंदी अपनी राष्ट्रीय भूमिका को अंजाम दे पायेगी और इसके समक्ष उत्पन्न चुनौतियाँ समाप्त हो सकेंगी। किंतु, यह प्रश्न आज भी अनुत्तरित है। वे तमाम चुनौतियाँ कब निढाल होंगी जो आजादी के बाद से भाषाई राजनीति को उकसाती रही हैं। हिंदी के राष्ट्रभाषा होने के सवाल या चिंता से आखिर हमें कब मुक्ति मिलेगी और हम गर्व से कह सकेंगे कि देश के सभीजन हिंदी भाषी हैं, हिंदी जानते और समझते हैं, हिंदी में संवाद करते हैं। हम हिंदी को राष्ट्रीय गौरव के साथ जोड़ सकें, यह पारस्परिक सहमति और सद्भावना से ही संभव होगा। आशय यह है कि क्या हम सब एकमत होकर हिंदी को भारत की राष्ट्रभाषा स्वीकार कर पायेंगे? यह दीगर बात है कि आज संपर्क भाषा के रूप में हिंदी संपूर्ण राष्ट्र में व्याप्त है और गैर हिंदी प्रदेशों में उसके बोलने वाले बहुसंख्यक हैं। कहीं न कहीं हिंदी भाषा और साहित्य जन-जन की संवेदना को संस्पर्श कर रहा है। अनुवाद के माध्यम से भी हिंदी का अन्य भारतीय भाषाओं के साथ परस्पर सौहार्द विकसित हो रहा है। सर्वविदित है कि आज सारे राजनीतिक दबावों और प्रभावों के बावजूद हिंदी राष्ट्रभाषा के संवैधानिक तौर पर न सही, किंतु व्यावहारिक धरातल पर संपूर्ण देश में बोली और समझी जा रही है। दरअसल हमारी बहुभाषिकता और सांस्कृतिक बहुलतावाद की अपनी अलग-अलग लक्ष्मण रेखाएँ हैं जिन्हें लांघकर हमें बृहत्तर भारत का स्वप्न साकार करने की दिशा में अग्रसर होना होगा। इतिहास के सुर्ख पन्नों को पलटे जाने के तमाम खतरों को पारकर हमारे संस्कृतिचेता जननायकों, रचनाकारों, इतिहासकारों आदि ने हर जायज़ वक्त पर हमें सचेत किया और राष्ट्रीय एकता के संदर्भों को हमारे समक्ष नये सिरे से रखा और समझाया है। बल्कि अपनी चिंता और चिंतन से हमें आंदोलित करने का प्रयास किया है। देश की भौगोलिक अखंडता, सांस्कृतिक और भावात्मक एकता कोई राजनीतिक विचारधारा भर न बनकर रह जाय, एतदर्थ सामाजिक जीवन में उन मूलभूत जीवनमूल्यों को आचरणीकृत करने के लिए सदैव जागृत रहना होगा । इस महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय चिन्तन के मूल में हिंदी भाषा का मुद्दा सर्वोपरि रहा है।

हिंदी भाषा की विकास यात्रा के इतिहास के उन पृष्ठों को पलटते हुए हम कहना चाहते हैं कि हिंदी ने पूरी शक्ति और संवेदनशीलता के साथ देश में समरसता की भावना को बढ़ावा दिया है। राष्ट्र की एकता को अक्षुण्ण बनाए रखने के उद्देश्य से हिंदी और उसके साहित्य की भूमिका बहुत रचनात्मक और बलवती रही है। हिंदी ने भारत की अस्मिता और राष्ट्रीय एकता के स्वप्न को साकार करने की दिशा में निरंतर अपने को गतिशील बनाये रखा है। देश की अस्मिता का ताना-बाना बुनने में हिंदी की अहम भूमिका से हम इंकार नहीं कर सकते हैं। संस्कृत और हिंदी दोनों ही भाषाएँ हमारे देश की आत्मा और अस्मिता से जुड़ी होने के साथ ही विश्व के अन्य देशों में हमारे देश की पहचान हैं। हजारों साल की सांस्कृतिक

विरासत को लेकर हमने हिंदी से संवाद किया तथा हिंदी को समृद्ध किया। उसे ज्ञान, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में समर्थ बनाने का प्रयास किया है।

भौगोलिक दूरियों के बावजूद इस पूरे देश को भावात्मक एकता के एकसूत्र में बाँधने के लिए, उसकी भावात्मक एकता को मजबूत करने वाला महत्त्वपूर्ण तत्त्व अनिवार्यत: हिंदी भाषा ही है। स्वतंत्रता आंदोलन में महात्मा गांधी ने हिंदी भाषा की ताकत को पहचान लिया था और उसे स्वराज के लिए घोषित किया। वस्तुत: हिंदी किसी क्षेत्र, जाति, धर्म एवं संप्रदाय की भाषा न होकर राष्ट्रीयता की अद्‌भुत कड़ी के रूप में पहचानी गई। एक संयोजक की भूमिका में रहकर हिंदी ने समस्त भारतीय भाषाओं को जोड़ने का काम किया। हिंदी-हिंदुस्तानी की एकता के पक्ष में जमनालाल बजाज ने मद्रास हिंदी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष पद से बोलते हुए कहा था कि ''हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हिंदी ईमान की भाषा है, प्रेम की भाषा है, राष्ट्रीय एकता की भाषा है और आजादी की भाषा है।'' हिंदी और उर्दू भाषा की एकता के संबंध में उन्होंने यह कहा कि ''इस देश की विभिन्न संस्कृतियों को एक करने के लिए हिंदी और उर्दू को एक होना चाहिए। एक राष्ट्रभाषा होनी जरूरी है।'' भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम देश की एकता के लिए हिंदी को आवश्यक मानते हैं। वे कहते हैं कि ''सभी राज्यों में 12वीं कक्षा तक हिंदी बोलना अनिवार्य कर दिया जाए ताकि सारे लोग हिंदी पढ़ना- लिखना सीख सकें।'' इसी प्रसंग में उन्होंने हिंदी को अपनाने पर विशेष बल दिया है। राजभाषा के रूप में देश के शासकीय प्रयोजनों को सिद्ध करने के साथ राष्ट्रभाषा के रूप में देश की एकता और अखंडता को मजबूत बनाए रखने का उत्तरदायित्व हिंदी पर रहा है। इसमें देश की परंपरा, विश्वास, धर्म, संस्कृति, लोकधर्मिता का स्वर समाहित है। हिंदी भारतीय जनमानस के हृदय की भाषा है और भारत का सार्वभौमिक विकास हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के द्वारा ही संभव हुआ है। हिंदी की सामर्थ्य उसकी बोलियों से भी है। ध्यातव्य है कि हिंदी क्षेत्र की चौबीस भाषाओं और अनेक बोलियों से मिलकर आधुनिक हिंदी बनी हुई है। हिंदी के बृहद सृजन-संसार में समस्त बोलियों के योगदान को हमें स्मरण रखना होगा। बोलियों का सारा साहित्य हिंदी साहित्य के इतिहास का आरंभिक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। लोकभाषा अवधी, ब्रजी, मैथिली, बुंदेली, राजस्थानी आदि बोलियों में लिखित साहित्य और उनके रचनाकारों ने हिंदी की गरिमामयी पहचान को अभिषिक्त किया है। मध्यकालीन हिंदी कविता के इतिहास में संत काव्य, सूफी कविता, भक्तिकाव्य से लेकर आधुनिक काल में भी बोलियों में लिखे हुए महत्त्वपूर्ण साहित्य को हिंदी साहित्य के अन्तर्गत रखा गया है। यह हिंदी के विकास का आरंभिक वृतांत है। हिंदी ही नहीं देश की तमाम बोलियों और उप बोलियों में लिखा हुआ साहित्य भारतीय अस्मिता और राष्ट्रीय एकीकरण की भावना को प्रशस्त करता है। निश्चय ही हिंदी की विभिन्न बोलियों को हिंदी के समग्र विकास की धारा से विच्छिन्न नहीं किया जा सकता है। यह साहित्य देश में सामाजिक और सांस्कृतिक समरसता को स्थापित करने और आध्यात्मिक चेतना से समन्वित करने का कालजयी प्रयास है। निस्संदेह हिंदी के साथ लोकभाषाई चेतना के विकसित होने का संदर्भ भी जुड़ा हुआ है। मध्यकाल हिंदी में काव्य के विकसित होने के साथ ही बोलियों के काव्यभाषा बनने का भी बहुमूल्य समय है। संपूर्ण रीतिकालीन काव्य भी लोकभाषाओं की प्रतिष्ठा और उसकी नवनिर्मिति का काल है। यह संपूर्ण साहित्य लोकजीवन और भारतीय सांस्कृतिक जीवन की विरासत है।

भारतीय संविधान ने हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में मान्यता प्रदान की और उसके विकास में अनुच्छेद 351 में कहा गया है कि "संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करें ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके। उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप कर किए बिना हिंदुस्तानी के और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक और वांछनीय हो वहाँ उसके शब्द भंडार के लिए मुख्यतः संस्कृत और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि निश्चित करे।"

देश की आजादी के संघर्ष की पुख्ता होती हुई जमीन पर खड़ी बोली यानी हिंदी आधुनिक युग के साहित्य की भाषा के रूप में निर्मित होने लगी थी। उस दौरान कविता और गद्य साहित्य की अनेक विधाओं में हिंदी ने अपनी शक्ति और सौंदर्य का परिचय दिया है। साहित्य की प्रकृति, विषयवस्तु, समस्याओं के साथ ही देश की राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियों के अनुरूप हिंदी का विकास संभव हुआ और हिंदी देश की अस्मिता और राष्ट्रीय भावनाओं को अभिव्यक्त करने का कारगर साधन बनती गई। स्वाधीनता आंदोलन काल में हमारे सभी राजनीतिक नेतृत्वकर्ताओं, साहित्यकारों, संस्कृतिकर्मियों और समाज सुधारकों ने जनता की पारस्परिक बोलचाल की भाषा के रूप में हिंदी की प्रतिष्ठा के लिए एकमत होकर समर्थन व्यक्त किया था।

स्वाधीनता काल के अनेक नेताओं और सुधारकों ने प्रांतीयता की भावना से सर्वथा ऊपर उठकर हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए अपना कृत-संकल्प बार-बार दुहराया है। गुजराती भाषी स्वामी दयानंद सरस्वती और महात्मा गांधी, बंगाल के राजाराम मोहन राय, केवलचन्द सेन,

रवीन्द्र नाथ टैगोर, सुभाष चन्द्र बोस आदि, महाराष्ट्र के संत नामदेव, गोपाल कृष्ण गोखले एवं रानाडे, तमिलनाडु के सुब्रमण्यम भारती, पंजाब के लाला लाजपत राय, आंध्र प्रदेश के प्रो.जी. सुंदररेड्डी जैसे अनेक अहिंदी भाषा भाषियों ने हिंदी के महत्त्व को समझा और उसे राष्ट्रीय भावना से जुड़ी भाषा के रूप में स्वीकार किया। वे सभी एकमत होकर हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने के पक्ष में खड़े हुए थे।

हिंदी के विकास के साथ देश की एकता का प्रश्न बहुत गहराई और व्यापक अर्थ और संदर्भ से जुड़ा हुआ था। हिंदी भाषा के समर्थक सभी जन भारत के गौरव के संवर्धन के लिए प्रतिबद्ध थे। राष्ट्रीय अस्मिता और एकता की भावना आजादी के संघर्षकाल का सर्वोपरि मूल्य था। इसी भावना को गतिशील करने के लिए हिंदी और उसके विकास के लिए हम प्रतिश्रुत रहे हैं और इसीलिए बहुत तेजी से हिंदी विकसित हुई। जहाँ तक अंग्रेजी के वर्चस्व का प्रश्न है तो महात्मा गांधी ने हमारी बौद्धिक चेतना के विकास में अंग्रेजी शिक्षा को बाधक मानते हुए 'हिंद स्वराज' में लिखा है कि अंग्रेजी शिक्षा से द्वेष और अत्याचार बढ़े हैं। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त लोगों ने जनता को ठगने और परेशान करने में कोई कोर कसर नहीं रखी है। भारत को गुलाम बनाने वाले तो हम अंग्रेजी जानने वाले लोग ही हैं। 5 फरवरी सन् 1916 को नागरिक सभा में अपने एक भाषण में गांधी ने अपने समर्थकों के साथ जीवनपर्यंत हिंदी के व्यवहार की शपथ ली थी। उन्होंने स्वतंत्रता- आंदोलन और हिंदी के प्रचार-प्रसार को एक दूसरे का पूरक बना दिया था।

स्वाधीनता आंदोलन के दौर में खड़ी बोली ने अपना साहित्यिक स्वरूप पा लिया था। हिंदी साहित्य के इतिहास में भारतेंदु युग और महावीर प्रसाद द्विवेदी युग में कविता और गद्य की नाना विधाओं के लेखन की भाषा के रूप में हिंदी ने अपना स्वरूप ग्रहण कर लिया था। उसी युग में राजनीति और समाज के क्षेत्र में आजादी का संघर्ष करने वाले हमारे जननायकों और क्रांतिचेता रचनाकारों ने हिंदी लेखन के लिए संघर्ष किया है। राष्ट्रीय और सामाजिक-सांस्कृतिक और राष्ट्रीय काव्यधारा के कवि माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्रा कुमारी चौहान, लक्ष्मण सिंह चौहान, बालकृष्ण शर्मा नवीन आदि अनेक कवि स्वाधीनता आंदोलन काल में आजादी के लिए जेल जाते हैं और भारत की अस्मिता और राष्ट्रीय एकता को हासिल करने के लिए जनजागरण केंद्रित साहित्य रचते हैं।

प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, निराला, मैथिलीशरण गुप्त, सियाराम शरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी, गया प्रसाद शुक्ल आदि का काव्य अपने समय और समाज की राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना से ओतप्रोत रहा है। भारत के गौरवशाली अतीत को स्मरण करते हुए महाकवि जयशंकर प्रसाद ने काव्य, नाटक, कथासाहित्य आदि विधाओं में लेखन किया और भारत की अस्मिता और राष्ट्रीय एकता के विविध संदर्भों को हमारे समक्ष पेश किया। निराला 'जागो फिर एक बार' जैसी कविताएँ लिखते हैं। सुभद्रा कुमारी चौहान 'झांसी की रानी' जैसी विश्व प्रसिद्ध कविता लिखकर आजादी के परचम को ऊँचा उठाती हैं। माखनलाल चतुर्वेदी बलिदानी भाव को राष्ट्रीय जागरण का स्वर बना देते हैं। बंकिम का 'वंदेमातरम्' गीत राष्ट्रीय जागृति का महान संदेश देता है। ये सभी रचनाकार भाषा के संस्कृतनिष्ठ रूप की महत्ता से भली-भांति परिचित थे। उन्होंने हिंदी को साहित्य की विशिष्ट भाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया है। सामान्य जन की भाषा का स्वरूप गढ़ने में देश के आम नागरिकों की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है। उन दिनों में हिंदी के स्वरूप को गढ़ने का प्रयास विविध स्तरों पर किया गया था। तत्कालीन ज्ञान-विज्ञान और कला आदि विषयों की भाषा का रंग-ढंग और तेवर या कहें कि संपूर्ण प्रकृति भारतीय अस्मिता के तत्वों से विनिर्मित है जिसे उसके समग्र संदर्भ में देखा जाना चाहिए। साहित्य हो या कला विषयवस्तु का संबंध देश की सांस्कृतिक विरासत और एकता से जुड़ा होना चाहिए। हमारी हिंदी की सांस्कृतिक और सामाजिक, राजनीतिक शब्दावली में भारतीय भाषाओं के शब्दों का मेल-जोल अद्भुत है। देश के विविध प्रांतों के साहित्य के अनुवाद कार्य से भी इस बात की पुष्टि होती है। बीसवीं सदी के आरंभ से ही हिंदी और भारतीय भाषाओं से निरंतर संवाद स्थापित करने का प्रयास किया गया था। हिंदी के साहित्यकारों द्वारा संस्कृत, बंगला, मराठी, पंजाबी आदि भाषाओं के काव्य और गद्य साहित्य का अनुवाद भाषाई रिश्तों को मजबूत करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम हैं।

भारतीय संविधान ने हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में मान्यता प्रदान की और उसके विकास में अनुच्छेद 351 में कहा गया है कि "संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करें ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके। उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप कर किए बिना हिंदुस्तानी के और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक और वांछनीय हो वहाँ उसके शब्द भंडार के लिए मुख्यतः संस्कृत और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि निश्चित करे।" आगे चलकर इन बातों पर हिंदी वालों ने चिंता की। वस्तुतः इस नयी सदी में भारत की अस्मिता के संवर्धन में हिंदी के उल्लेखनीय योगदान को स्मरण करने की जरूरत है। भारतीय भाषाओं और विभिन्न अस्मिताओं के मध्य एकता की अंत:सूत्रता स्थापित करने का आधार हिंदी है।

हमें हिंदी पर गर्व करने के साथ ही भारतीय संस्कृति, भाषाओं और बोलियों और उसमें लिखित साहित्य की समृद्धि के लिए सतत जागरूक और सक्रिय रहने की महती आवश्यकता है। ❑

भारत की राष्ट्रीय और सांस्कृतिक एकता में हिंदी की भूमिका

डॉ. रेनू त्रिपाठी
सहायक आचार्य,
हिंदी विभाग,
सिद्धार्थ विश्वविद्यालय,
कपिलवस्तु (उ.प्र.)

एक ध्वज, एक भाषा के साथ राष्ट्र की स्वतन्त्रता और अखण्डता का स्वप्न जीवंत हो रहा था। भाषायी अस्मिता राष्ट्रीय अस्मिता का प्रतीक बनकर उभरी थी और हिंदी विभिन्न भारतीय बोलियों को समेकित रूप में अपनाते हुए सांस्कृतिक समृद्धि का आधार बन रही थी।

किसी भी राष्ट्र का सांस्कृतिक औदात्य वहाँ की भाषायी चेतना से जुड़ा होता है। वस्तुत: कोई भी संस्कृति अपने समय के प्रश्नों से टकराते हुए, अपने समय की समस्याओं से मुठभेड़ करते हुए ही विकास अवस्था को प्राप्त करती है और इसमें भाषा की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। भारतीय संस्कृति के आलोक में यदि देखें तो हिंदी भाषा ने अपने साहित्य के माध्यम से समाज में सदैव मूल्यों की स्थापना की है। समग्र भारतीय चिन्तन और अनुभूतियों का प्रत्यक्षीकरण हिंदी के द्वारा सम्भव हुआ है। हिंदी भाषा में सभी मानवीय मूल्य, सांस्कृतिक विरासत को बचाये रखने का संघर्ष, राष्ट्रीय आन्दोलनों का व्यापक स्वरूप संरक्षित है।

हिंदी में गहरा इतिहास बोध है। उसने संघर्ष के अनेक दौर देखे हैं और भारतीय मानस के एकीकरण का सशक्त माध्यम रही है। यह भारत में होने वाले सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तनों की साक्षी रही है। हिंदी वह भाषा है जिसका व्यवहार शिक्षित, ग्रामीण, कम पढ़े-लिखे सभी के द्वारा होता है। भारत की बहुभाषिकता के बावजूद हिंदी ने उदार भाव से सम्पूर्ण राष्ट्र को एक करने का दायित्व निभाया है। सांस्कृतिक जागरण की जो पीठिका हिंदी ने निर्मित की, वह आज भी हमारी एकता का आधार है। वस्तुत: हिंदी भाषा हमारे उस मनोभाव को पोषित करती है जिसके अन्तर्गत वैविध्य के बीच अखण्डता का भाव निहित है।

पराधीनता के दौर में एक ओर सामाजिक-सांस्कृतिक एकता का भाव प्रबल हो उठा तो दूसरी ओर भाषायी एकता का नारा बुलन्द हुआ। देश की सांस्कृतिक चेतना को प्रखर रूप से उभारने के लिए यह आवश्यक था कि भाषायी स्तर पर पूरे भारतवर्ष में एकता स्थापित हो। इसके लिए देश भर में एक स्वर से हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाए जाने का स्वर गूंज उठा। वस्तुत: स्वाधीनता प्राप्ति के लिए किए जा रहे विभिन्न आन्दोलनों में सामान्य जनता की सहभागिता महत्त्वपूर्ण थी और लोक चेतना में हिंदी सहज रूप से रची-बसी थी। ऐसे में लोक मानस को जगाने और राष्ट्रीय आन्दोलनों में बढ़-चढ़कर भागीदारी करने के लिए जन-साधारण को प्रेरित करने का पुनीत कार्य हिंदी द्वारा सम्पन्न हुआ। छोटे-मोटे आपसी भेदों को दरकिनार कर राष्ट्रीय एकता के प्रबल कारक के रूप में हिंदी ने

बड़ी सशक्त भूमिका का निर्वहन किया।

सांस्कृतिक विरासत को अक्षुण्ण रखने के लिए लोक में एक बोध जगाना अनिवार्य था और इसे हिंदी भाषा के सहारे सरलता से फलीभूत किया जा सका।

क्षेत्रीय भाषाओं को पूरा सम्मान देते हुए भी हिंदी को स्थायी तौर पर राष्ट्रभाषा बनाने का प्रयास स्वाधीनता की अलख जगाने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम था। देश परतंत्र था और आजादी ही मुख्य चिन्ता थी। ऐसे में एक ऐसी भाषा की जरूरत महसूस की गयी जो लोगों की चेतना में बसी हो और जो समूचे राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करते हुए लोगों को एकता के सूत्र में आबद्ध कर सके। एक ध्वज, एक भाषा के साथ राष्ट्र की स्वतन्त्रता और अखण्डता का स्वप्न जीवंत हो रहा था। भाषायी अस्मिता राष्ट्रीय अस्मिता का प्रतीक बनकर उभरी थी और हिंदी विभिन्न भारतीय बोलियों को समेकित रूप में अपनाते हुए सांस्कृतिक समृद्धि का आधार बन रही थी।

वस्तुतः भारत में फैली क्षेत्रीय विविधता जो रहन-सहन, खान-पान अनेक स्तरों पर देखी जा सकती है, उसमें बोली-बानी का अन्तर विशेष रूप से देखने को मिलता है। इसलिए राष्ट्रीय एकता का प्रचार-प्रसार करने की दिशा में इस विविधता को वहन करते हुए एक ऐसी भाषा को सामने रखा गया जो लोगों के बीच परस्पर सेतु का कार्य कर सके और उनके राष्ट्र-प्रेम को एक साथ एक दिशा में प्रतिध्वनित करने में समर्थ हो। स्वाभाविक रूप से हिंदी लोगों के बीच अन्तरंगता बढ़ाने और उन्हें एकजुट करने का कारण बनी। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद हिंदी की सशक्त अभिव्यक्ति की प्रकृति पर स्थापित हुआ।

देखा जाय तो भारत में जन-संस्कृति के फलने-फूलने में हिंदी की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। वह भारतीयता के प्रतीक के रूप में जन-मन में गहराई से व्याप्त है। काका कालेलकर का मत था - ''हिंदी सिद्धों की भाषा है, संतों की भाषा है और साधारण जन की भाषा है जिसकी सरलता, सुगमता, सुघड़ता और अमरता स्वयं सिद्ध है। हिंदी उत्तर से दक्षिण तक जोड़ने वाली सबसे बड़ी कड़ी है।''

राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी की स्वीकार्यता का एक बड़ा कारण उसका समृद्ध साहित्य भी है। कविता से लेकर गद्य की सभी विधाओं में निरन्तर उत्कृष्ट लेखन एक विस्तृत फलक को घेरता है। हिंदी साहित्य सदा से ही मानवीय और सामाजिक समरसता का पक्षधर रहा है जो भारतीय संस्कृति की जीवंतता का मूल है। भारतेन्दु ने भारत को स्वाधीन चेतना से सम्पृक्त करने का बीड़ा उठाया और अंग्रेजों की कूटनीति और बर्बरता के विरुद्ध देशवासियों को सजग किया। 'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल की अनुगूंज ने भारतीय मानस को सदैव आन्दोलित किया है। वस्तुतः हिंदी ने अपने समृद्ध साहित्य से सामाजिक जागरण के साथ-साथ राष्ट्रीय जागरण को भी ऊर्जा दी। जहाँ एक ओर कबीर, सूर, तुलसी, मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, प्रसाद, निराला, सुभद्राकुमारी चौहान जैसे रचनाकारों ने हिंदी के माध्यम से भारतीय लोगों को भाव-सेतु से जोड़ने का कार्य किया वहीं स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द सरस्वती, मदनमोहन मालवीय, दीनदयाल उपाध्याय, बालगंगाधर तिलक, महात्मा गांधी आदि ने हिंदी के सहारे ही सामाजिक और राष्ट्रीय एकता की नींव डाली।

गुलामी के भीषण समय में हिंदी भाषा में रचे गये अनेक गीतों ने राष्ट्र-प्रेम की भावना को जन-जन के भीतर जगाया और अंग्रेजी सत्ता की जड़ें हिला दी। नवजागरण की कोंपलें फूट चुकी थीं, राष्ट्रीय चेतना का पल्लवन हो चुका था और देश को सांस्कृतिक रूप से अखण्ड रखना ही राष्ट्र सेवियों का लक्ष्य था जिसके लिए हिंदी अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बनी।

सही मायने में राष्ट्रभाषा का सीधा सम्बन्ध उस चेतना से होता है जो एक राष्ट्र के लोगों में संगठित होने का भाव पैदा करती है। इस दृष्टि से देखें तो हिंदी का समूचा परिदृश्य स्वातंत्र्य प्राप्ति के संघर्ष में महत्त्वपूर्ण रहा है। भारतेन्दु, महावीर प्रसाद द्विवेदी, मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, निराला, आदि अनेक साहित्यकारों की बानी तथा हिंदी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं ने भारतीय समाज के साथ गहरा तादात्म्य स्थापित किया।

हिंदी की सर्जनात्मकता ने देश-प्रेम को बल दिया और राष्ट्रीय आन्दोलन को व्यापक स्वरूप मिला। राष्ट्र के प्रति अटूट निष्ठा और समर्पण का भाव लिए हुए हिंदी अपनी जीवंतता से राष्ट्रीय एकता का प्रतीक बन गयी।

हिंदी भाषा की सर्वग्राह्यता उसकी वास्तविक ताकत है और कहीं न कहीं स्थानीय भाषाओं के महत्त्व को स्वीकारते हुए उसे स्वाधीन भारत की मानसिक बुनावट के साथ आगे बढ़ना है क्योंकि वह केवल विचारों की अभिव्यक्ति का साधन मात्र नहीं है, हमारी संस्कृति की संवाहिका भी है। रामवृक्ष बेनीपुरी ने भाषा के सन्दर्भ में बड़ी महत्त्वपूर्ण बात कही थी कि ''भाषा का निर्माण सेक्रेटेरिएट में नहीं होता, भाषा गढ़ी जाती है जनता की जिह्वा पर।'' निःसंदेह हिंदी भारत के लोक-मानस की भाषा है। यही कारण है कि वह देश की संस्कृति और सभ्यता से गहरे जुड़ी है।

यह कहना सर्वथा उचित होगा कि अपनी भाषा में किया गया चिन्तन ही हमारी सर्जनात्मकता को मौलिकता प्रदान करता है। अपनी परम्परा और संस्कृति के विविध रूपों को सहेजते हुए हिंदी भाषा ने विकास के दौर में अपने को निरन्तर परिमार्जित भी किया है। अन्य बोलियों के साथ हिंदी की साझेदारी ने हिंदी के रूप को तो निखारा ही, भाषिक एकता की मिसाल भी कायम की। आजादी के बाद हिंदी को राजभाषा घोषित करने के पीछे उद्देश्य यही था कि धीरे-धीरे अंग्रेजी के वर्चस्व को समाप्त कर हिंदी अपने अखिल भारतीय स्वरूप के साथ भारत की सांस्कृतिक एकता की संवाहक बनेगी। हालांकि कुछ पूर्वाग्रहों और अन्तर्विरोधों के चलते यह पूरी तरह सम्भव नहीं हो सका।

सबको साथ लेकर चलने की प्रवृत्ति हिंदी की ताकत है। लोक में प्रचलित बोलियों व क्षेत्रीय भाषाओं को बराबर सम्मान देते हुए, उनके सहयोग से वह जनता के भावों की भाषा बनी है। पं. विद्यानिवास मिश्र ने लिखा, 'मेरे लिए हिंदी भाषा नहीं, मन है, वह मन, जिसमें पपीहे की स्वाभिमानी चाह है।' उनका मानना था कि हिंदी भाषा में 'सुरसरि सम सब कर हित होई' का अनूठा भाव-बोध है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि किसी भी राष्ट्र की भाषायी चेतना का ह्रास वहाँ की संस्कृति को कमजोर बनाता है। यही कारण है कि भारत में ब्रिटिश शासन का एक प्रमुख लक्ष्य था हिंदी तथा दूसरी भारतीय भाषाओं को समाप्त कर देना ताकि भारत को सांस्कृतिक तौर पर अशक्त किया जा सके। लोक भाषा को नष्ट कर भारतवर्ष के समग्र चिन्तन को उखाड़ फेंकने के लिए ही मैकाले द्वारा अंग्रेजी शिक्षा को स्थापित किया गया। भारतीय संस्कृति को ध्वस्त करने के लिए उसने भाषायी बिखराव की बात की। उसने कहा था, ''मैंने इस मुल्क में अपार सम्पदा देखी है। उच्च उदात्त मूल्यों को देखा है।....... भारतीयों को कोई भी जीत नहीं सकता यह मैं मानता हूँ, तब तक जब तक कि हम इस मुल्क की रीढ़ ही ना तोड़ दें, और भारत की रीढ़ है उसकी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विरासत। इसलिए मैं यह प्रस्ताव करता हूँ कि भारत की पुरानी शिक्षा व्यवस्था को हम बदल दें। उसकी संस्कृति को बदलें ताकि हर भारतीय यह सोचे कि जो भी विदेशी है, वह बेहतर है। वे यह सोचने लगें कि अंग्रेजी भाषा महान है, अन्य देसी भाषाओं से। इससे वे अपना सम्मान खो बैठेंगे। अपनी देशज जातीय परम्पराओं को भूलने लगेंगे और फिर वे वैसे ही हो जाएंगे जैसा हम चाहते हैं, सचमुच एक आक्रान्त एवं पराजित राष्ट्र।''

हिंदी भाषा की सर्वग्राह्यता उसकी वास्तविक ताकत है और कहीं न कहीं स्थानीय भाषाओं के महत्त्व को स्वीकारते हुए उसे स्वाधीन भारत की मानसिक बुनावट के साथ आगे बढ़ना है क्योंकि वह केवल विचारों की अभिव्यक्ति का साधन मात्र नहीं है, हमारी संस्कृति की संवाहिका भी है। रामवृक्ष बेनीपुरी ने भाषा के सन्दर्भ में बड़ी महत्त्वपूर्ण बात कही थी कि "भाषा का निर्माण सेक्रेटेरिएट में नहीं होता, भाषा गढ़ी जाती है जनता की जिवा पर।" निःसंदेह हिंदी भारत के लोक-मानस की भाषा है। यही कारण है कि वह देश की संस्कृति और सभ्यता से गहरे जुड़ी है।

राष्ट्रभाषा वह है जो राष्ट्र के सांस्कृतिक रूपों की अभिव्यंजना की सामर्थ्य रखती है और जो पूरे देश में सम्पर्क का सशक्त माध्यम बन सके। जहाँ तक हिंदी का प्रश्न है तो यह पूरे भारत में सर्वाधिक लोगों द्वारा बोली और समझी जाती है। गाँधी जी ने स्पष्ट शब्दों में घोषणा की थी कि यदि स्वराज्य करोड़ों भूखों मरने वालों, निरक्षरों, दलितों का है तो हिंदी ही एकमात्र राष्ट्रभाषा हो सकती है। हिंदी की समन्वयात्मक प्रकृति भारतीय संस्कृति के अनुकूल ही है। वर्तमान समय में फिजी, मॉरीशस, त्रिनिदाद, सूरी जैसे अनेक देशों में हिंदी का स्थापित होना भारतीय संस्कृति के स्थापित होने जैसा ही है।

भाषा को बहता नीर कहा गया है अर्थात् वही भाषा दीर्घजीविता को प्राप्त कर सकती है जो बहते नीर के समान सतत् प्रवाहमान हो और इस प्रवाह में नित नवीनता को स्वीकारने का साहस भी हो। इस कसौटी पर हिंदी पूरी तरह खरी उतरती है जिसने सदा ही अन्य बोलियों के वैशिष्ट्य को सहज भाव से आत्मसात करते हुए अपने लिए परिवर्तन और परिमार्जन के द्वार खुले रखे हैं। ❑

अरुणाचल प्रदेश की भाषाई बहुलता का सेतु है 'हिंदी'

डॉ. अरुण कुमार पाण्डेय
सह-आचार्य, हिंदी विभाग
राजीव गाँधी विश्वविद्यालय,
रोनो हिल्स, दोईमुख,
(अरुणाचल प्रदेश)

किसी भी राष्ट्र के लोगों में राष्ट्रीय एकता की भावना के विकास और आपसी संबंधों हेतु एक ऐसी भाषा की नितांत आवश्यकता होती है, जिसका अनुसरण राष्ट्रीय स्तर पर किया जा सके। किसी भी राष्ट्र की सबसे ज्यादा बोली तथा समझी जाने वाली भाषा ही वहाँ की राष्ट्रभाषा होती है। राष्ट्र के मजबूत बनने व उसकी एकता-अखंडता को अक्षुण्ण रखने के लिए राष्ट्रभाषा की सख्त आवश्यकता होती है। राष्ट्रभाषा राष्ट्र की जनता की भाषा होती है। हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा है। यह भारतीय जनता की राष्ट्रीय चेतना और अस्मिता की प्रतीक है। अज्ञेय की दृष्टि में- 'सभी भाषाओं में कहीं न कहीं प्रदेश बोलता है। हिंदी ही एकमात्र ऐसी भाषा है जिसमें पूरा देश बोलता है।' डॉ. भीमराव आंबेडकर भाषा को संस्कृति का कवच मानते हैं - "भाषा के माध्यम से संस्कृति सुरक्षित रहती है। चूँकि भारतीय एक होकर सामान्य संस्कृति के विकास करने के आकांक्षी हैं, अतः सभी भारतीयों का अनिवार्य कर्त्तव्य है कि हिंदी को अपनी भाषा के रूप में अपनाएँ।" हिंदी केवल एक भाषा नहीं भारतीयता का अविरल प्रवाह है।

यहाँ प्रश्न यह उठता है कि हिंदी के विकसित होने के कारण क्या अन्य भारतीय भाषाएँ या जनपदीय बोलियाँ कमजोर पड़ जाती हैं? कदापि नहीं। भारत की सभी भाषाएँ विगत सौ वर्षों में अधिक विकसित हुई हैं। हिंदी क्या भारत की कोई भी भाषा अपनी पड़ोसी भाषा को उपेक्षित नहीं करती है। मनोवैज्ञानिक कारणों से ऐसा प्रतीत हो सकता है कि हमारी जनपदीय भाषाएँ या बोलियाँ दूसरी भाषाओँ के कारण दब रही हैं या दबाई जा रही हैं। भारतीय भाषाओं की खूबसूरती उनकी सहजीविता का सिद्धांत है। वे साथ-साथ बढ़ती हैं, फलती-फूलती हैं तथा विस्तार पाती हैं। हिंदी की अस्मिता विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं और बोलियों से मिलकर बनी है। विद्यापति का 'देसल बअना सब जन मिट्ठा' पद इस तर्क को बल देता है। कबीर से लेकर प्रेमचंद और बाबा नागार्जुन तक का साहित्य इसका दृष्टांत है। भाषाएँ कोई भी हों, वे अपने साकार रूप में तभी विकसित हो सकती हैं, जब उनके साथ चलने वाली अन्य भाषाओं या बोलियों से वह संवाद करे। भाषा का मुख्य कार्य ही संवाद होता है। संवाद से लोग आपस में जुड़ते हैं, एक दूसरे के नजदीक आते हैं। हिंदी का विकास इन्हीं जनपदीय बोलियों व क्षेत्रीय भाषाओं के साथ संवाद के माध्यम से ही अब तक हो सका है, या भविष्य में होगा। हिंदी के इस वैशिष्ट्य को पहचान कर गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने कहा था - "आधुनिक भारत की संस्कृति एक

विकसित शतदल कमल के समान है, जिसका एक-एक दल एक-एक प्रांतीय भाषा और उसकी संस्कृति है। हम चाहते हैं कि भारत की सब प्रांतीय बोलियाँ जिसमें सुन्दर साहित्य सृष्टि हुई है, अपने-अपने घर में, प्रान्त में रानी बन कर रहें और आधुनिक भाषाओं के हार की मध्यमणि हिंदी भारत-भारती होकर विराजती रहें।'' यह सत्य सिद्ध है कि समूचे देश को एक सूत्र में बाँधने, ऐक्य को स्थापित करने और जातीयता के भाव को जाग्रत रखने की शक्ति हिंदी भाषा में है।

भाषाई बहुलता हमारे देश की कमजोरी नहीं ताकत है। यह भारत की आतंरिक शक्ति को मजबूत करती है। यहाँ 1800 से अधिक भाषाएँ-बोलियाँ हैं। संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाओं को मान्यता मिली है। बोलियों की एक बड़ी संख्या ऐसी है जो संविधान की आठवीं अनुसूची में तो नहीं है, लेकिन अपने क्षेत्र में प्रमुख रूप से बोली जाती है। पूर्वोत्तर भारत का सीमांत प्रदेश अरुणाचल प्रदेश भाषाई वैविध्य की दृष्टि से अनोखा प्रदेश है। सन 2011 की जनगणना के अनुसार यहाँ 26 प्रमुख जनजातियाँ और 100 से अधिक उपजनजातियाँ बहुरंगी सांस्कृतिक परंपराओं में निवास करती हैं। इन सभी जनजातियों-उपजनजातियों की अपनी-अपनी बोलियाँ-उपबोलियाँ हैं। उल्लेखनीय बात यह है कि एक जनजाति दूसरी जनजाति की बोलियों को नहीं समझ सकती है। इसका कारण यहाँ की भौगोलिक दुरूहता है। गगनचुम्बी पर्वतों की चोटियाँ दुरूहता के मुख्य कारण रही हैं। इन्हीं दुर्गम घाटियों के बीच छोटे-छोटे जनजातीय समुदायों का जीवन विकसित हुआ है। आवागमन की दुर्गमता के कारण इनका परस्पर मिलना-जुलना नहीं होता था। इनके छोटे दायरे में केन्द्रित होकर रहने के कारण दूसरी जनजातियों की बोलियों को समझने की आवश्यकता नहीं पड़ी। अत्यंत जरूरत के क्षणों में असमिया भाषा के प्रयोग से काम चल जाता था। विगत कुछ वर्षों में संपर्क भाषा के रूप में हिंदी ने अरुणाचल प्रदेश में अपना स्थान बनाया है।

पूर्वोत्तर के राज्यों में अरुणाचल प्रदेश एक ऐसा राज्य है जिसने हिंदी को अपनाया ही नहीं, ह्रदय से लगाया है। इनके दैनिक जीवन के प्रत्येक क्रिया कलापों में हिंदी समाई हुई है। हिंदी के प्रयोग से सभी जनजातियों के बीच संवाद करना सरल हुआ है। हिंदी की मूल प्रकृति लोकतान्त्रिक और रागात्मक संबंध निर्मित करने की रही है। अपने इस सामाजिक मिजाज के कारण यह सामान्य बोल-चाल से लेकर पठन-पाठन तक में अपनाई गई है। यहाँ की राजकाज की भाषा अंग्रेजी होने के बावजूद हिंदी को जन स्वीकार्यता का प्रमाण इस बात से मिलता है कि उच्च अधिकारी या जनप्रतिनिधि अपने भाषणों की शुरुआत अंग्रेजी से करते हैं और सामने खड़ी जनता की उदासीन प्रतिक्रिया को भांपकर थोड़ी देर में हिंदी में बोलने लगते हैं। विधानसभा में विधायकों और मंत्रियों को हिंदी में भाषण देते हुए सुना जा सकता है। ऐसा दृश्य अन्य हिंदीतर प्रान्तों में नहीं देखने को मिलेगा। यहाँ के लोग हिंदी के साथ अपनेपन के साथ जुड़े हैं।

भाषा और साहित्य का जुड़ाव राष्ट्र के सांस्कृतिक संबंधों को प्रगाढ़ करता है। अरुणाचल प्रदेश सहित संपूर्ण पूर्वोत्तर में हिंदी सहज रूप में आगे बढ़ रही है। इन हिंदीतर प्रान्तों के लाखों लोगों ने अपनी मातृभाषा से बढ़कर हिंदी को अंगीकार किया है। इसके संवर्धन के लिए महती कार्य किया है। ऐसे में हिंदी के विकास के लिए एक समन्वयवादी सोच के साथ हिंदीतर भाषा-बोलियों की समृद्ध मौखिक साहित्य को संरक्षण किया जाना चाहिए। ऐसी प्रभावी व्यवस्था होनी चाहिए कि हिंदीतर राज्यों की भाषाओं को हिंदी राज्यों में प्रयाप्त सम्मान मिले। सभी भाषाएँ अपनी भाषाएँ हैं।

अरुणाचल प्रदेश में हिंदी न केवल संवाद के स्तर तक सीमित है बल्कि पठन-पाठन के क्षेत्र में प्राथमिक विद्यालयों से लेकर महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में पढ़ी-पढ़ाई जा रही है। विद्यालयों में कक्षा 10 तक हिंदी अनिवार्य रूप से पढ़ाई जाती है। राज्य सरकार ने केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (सी.बी.एस.सी.) के पाठ्यक्रम को हू-बहू अंगीकृत किया है। उच्च शिक्षा के स्तर पर महाविद्यालयों में हिंदी प्रतिष्ठा (आनर्स) विषय के रूप में छात्रों में लोकप्रिय है। यहाँ 19 राजकीय महाविद्यालय, एक केन्द्रीय विश्वविद्यालय और तीन निजी विश्वविद्यालय हैं। इन महाविद्यालयों-विश्वविद्यालयों में अध्ययनरत कुल छात्रों की संख्या के एक-तिहाई छात्र अनिवार्य या प्रतिष्ठा (आनर्स) विषय के रूप में हिंदी पढ़ते हैं। हिंदी पढ़ने को लेकर छात्रों में इतना उत्साह रहता है कि निर्धारित सीटें भर जाने के बाद भी नामांकन के लिए दबाव बनाते हैं। स्नातकोत्तर कक्षाओं में प्रवेश के लिए राजीव गाँधी विश्वविद्यालय, दोइमुख में 62 सीटें निर्धारित की गयी हैं। इतनी सीटों के लिए 350 से अधिक आवेदन प्राप्त होते हैं। विश्वविद्यालय इसके लिए प्रवेश परीक्षा आयोजित करता है। इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय बात यह है कि यहाँ हिंदी के अध्ययन-अध्यापन से जुड़े हुए अध्यापक और विद्यार्थी-शोधार्थी त्रिभाषा में पारंगत हैं। अपनी स्थानीय भाषाओं के ज्ञान के साथ हिंदी-अंग्रेजी में इन्हें दक्षता प्राप्त है।

यहाँ हिंदी नए तेवर और कलेवर के

साथ आगे बढ़ रही है। राजीव गाँधी विश्वविद्यालय, दोइमुख का हिंदी विभाग बहुत पुराना नहीं है। सन् 1999 में तत्कालीन अरुणाचल विश्वविद्यालय के अधीन हिंदी विभाग खुला था। इतने कम समय में हिंदी विभाग ने अनेक उपलब्धियाँ हासिल की हैं। तब से लेकर आज तक तीन दर्जन से अधिक छात्रों ने पीएच.डी. की डिग्री प्राप्त की है और लगभग इतने ही शोध हेतु पंजीकृत हैं। नेट-स्लेट उतीर्ण करने वाले छात्रों की संख्या भी उल्लेखनीय है। फलस्वरूप यहाँ के सभी राजकीय महाविद्यालयों में यहीं के छात्र-छात्राएँ अब अध्यापक-अध्यापिका के रूप में कार्यरत हैं। हिंदी भाषी अध्यापक अब कुछ संख्या में रह गए हैं। हिंदी विभाग को अल्प समय में इस ऊँचाई तक ले जाने में प्रो. नंद किशोर पाण्डेय जो अभी राजस्थान विश्वविद्यालय में प्रोफेसर एवं अधिष्ठाता कलासंकाय के रूप में अपनी सेवा दे रहे हैं का अवर्णनीय योगदान रहा है। उनके कठोर परिश्रम और कुशल अध्यक्षीय मार्गदर्शन में विभाग की यश-प्रतिष्ठा बढ़ी। विगत वर्षों में हिंदी को स्थापित करने के लिए जो कार्य किये गए उसका प्रतिफल मिलने लगा है। यहाँ के लोक-साहित्य को हिंदी में लिखने का प्रयास किया जा रहा है। यहाँ की सभी जनजातियों का अपना समृद्ध लोक-साहित्य है। समाज का बहुत सारा अनुभव सिद्ध ज्ञान इसमें बिखरा पड़ा है। दूसरी भाषाओं-बोलियों के साथ तुलनात्मक अध्ययन से सांस्कृतिक संबंधों को मजबूती मिलती है। इस दिशा में कार्य प्रारंभ हो गया है। महाविद्यालय में कार्यरत एक अध्यापिका 'आदी और भोजपुरी के लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन' पर तुलनात्मक शोध कर रही है। इसके साथ अनेक शोधार्थी विभिन्न विषयों पर शोधकार्य कर रहे हैं। यहाँ के अलिखित लोक साहित्य को वैश्विक रूप देने के लिए हिंदी में लेखन किया जा रहा है। प्रो. ओकेन लेगो, डॉ. जोराम यालाम नाबाम, डॉ. जमुना बीनी तादर, डॉ. जोराम आनिया ताना, डॉ. सोनम वांगमू आदि स्थानीय लेखक उभरकर आये हैं जो अपनी कविता, कहानियों और आलोचनात्मक आलेखों के द्वारा यहाँ के लोक-साहित्य को हिंदी लेखन के द्वारा उजागर कर रहे हैं।

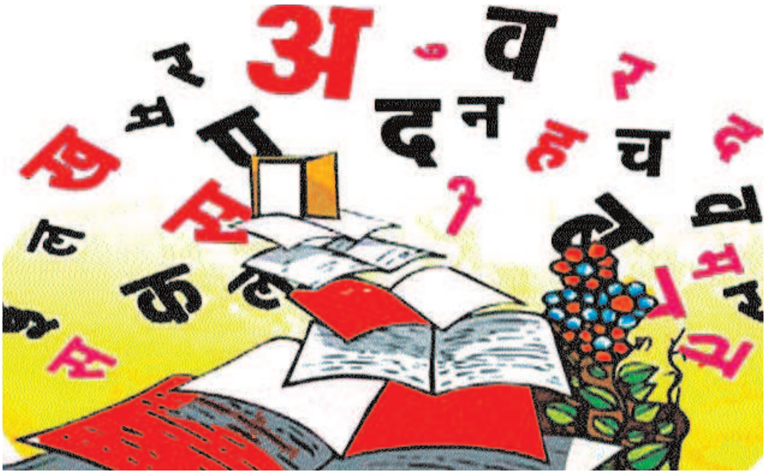

भाषा और साहित्य का जुड़ाव राष्ट्र के सांस्कृतिक संबंधों को प्रगाढ़ करता है। अरुणाचल प्रदेश सहित संपूर्ण पूर्वोत्तर में हिंदी सहज रूप में आगे बढ़ रही है। इन हिंदीतर प्रान्तों के लाखों लोगों ने अपनी मातृभाषा से बढ़कर हिंदी को अंगीकार किया है। इसके संवर्धन के लिए महती कार्य किया है। ऐसे में हिंदी के विकास के लिए एक समन्वयवादी सोच के साथ हिंदीतर भाषा-बोलियों की समृद्ध मौखिक साहित्य को संरक्षण किया जाना चाहिए। ऐसी प्रभावी व्यवस्था होनी चाहिए कि हिंदीतर राज्यों की भाषाओं को हिंदी राज्यों में पर्याप्त सम्मान मिले। सभी भाषाएँ अपनी भाषाएँ हैं। 'सब हमारी हैं, हम सबके हैं' के गंभीर सोच के साथ भावात्मक लगाव स्थापित करने के लिए केंद्रीय हिंदी संस्थान के पूर्व निदेशक प्रो. नंद किशोर पाण्डेय ने अपने कार्यकाल में अध्येता कोशों के निर्माण का पुनीत कार्य किया है। पूर्वोत्तर सहित देश के पचास से भी अधिक भाषाओं-बोलियों पर द्वि-भाषिक अध्येता कोशों का निर्माण कराया है। अरुणाचल प्रदेश की दस से अधिक बोलियों-भाषाओं पर अध्येता कोश का निर्माण का काम चल रहा है और कुछ पूर्ण हो गया है। हिंदी-निशी, हिंदी-आदी, हिंदी-गालो, हिंदी-नोकते, हिंदी-मोन्पा आदि द्वि-भाषिक कोश प्रकाशित हो चुके हैं तथा शेष कोशों का निर्माण प्रक्रिया में है। केन्द्रीय हिंदी संस्थान द्वारा अरुणाचल प्रदेश की सभी 26 बड़ी जनजातियों के मौखिक लोक-साहित्य को हिंदी में प्रकाशित करने संबंधी परियोजना को मूर्त रूप दिया जा रहा है। इस क्रम में 'नोक्ते लोक-साहित्य' के संग्रह और संपादन का दायित्व में स्वयं निर्वाहन कर रहा हूँ। इस परियोजना की कल्पना और उसको मूर्त रूप देने का कार्य प्रो. नंद किशोर पाण्डेय जी ने अपने कार्यकाल में किया था। अरुणाचल सहित पूर्वोत्तर में हिंदी धीरे-धीरे यहाँ के लोगों और भाषाओं की सहचरी बन गयी है। इसे गति देने के लिए और अधिक सकारात्मक प्रयास के साथ अपने आत्म विश्वास को जगाने और दृढ़ करने की आवश्यकता है। राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन के शब्दों में- ''हिंदी को अपनाओ, पनपाओ। हिंदी राष्ट्रीयता के उत्थान में सहायक बने। हिंदी की श्रीवृद्धि के लिए प्रत्येक भाषा-भाषी को कुछ काम करना चाहिए। हिंदी दूर-सुदूर फैले, प्रेम की मधुर वयार से, अधिकार की अंधी आंधी से नहीं, दृढ़ता से परन्तु विनम्रता पूर्वक हिंदी की सेवा करो।'' ❑

हिंदी पत्र-पत्रिकाएँ एवं हिंदी चेतना की जागृति

प्रो. आनंद प्रकाश त्रिपाठी 'रत्नेश'

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय,
जैन विश्व भारती संस्थान,
मान्य विश्वविद्यालय,
लाडनूं (राज.)

हिंदी अगर आज देश के अधिकांश भागों में बोली जाती है और अधिकांश लोग इसे भाल की बिंदी बनाने के लिए अग्रसर हैं तो इसका श्रेय विभिन्न कालखंड में प्रकाशित होने वाली हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं को जाता है। हिंदी को जन की भाषा, मन की भाषा और जनता-जनार्दन की भाषा बनाने का श्रेय निश्चित रूप से हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं को है। आज से लगभग 200 वर्ष पूर्व इन पत्र-पत्रिकाओं ने हिंदी रूपी महल की बुनियाद को मजबूत बनाने का जो बीड़ा उठाया, उसके शिखर को मजबूती प्रदान कर रही हैं वर्तमान समय की पत्र पत्रिकाएँ।

लगभग 200 वर्ष पूर्व 1826 में भारतेंदु पूर्व युग में जुगल किशोर के संपादकत्व में कोलकाता से उदंत मार्तंड नाम की प्रथम साप्ताहिक पत्रिका का संपादन हुआ तो हिंदी जगत ने पीछे मुड़कर कभी नहीं देखा। इस युग में कलकत्ता से ही प्रकाशित होने वाली बंगदूत, प्रजामित्र, मार्तंड, साम्य मार्तंड आदि साप्ताहिक पत्रिकाओं का संपादन हिंदी की नींव को मजबूत बनाने के लिए माना जा सकता है। इस दिशा में काशी भी पीछे नहीं रहा। यहाँ से प्रकाशित बनारस अखबार और सुधाकर साप्ताहिक का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। अनियमित प्रकाशन और इनमें उर्दू की प्रधानता होते हुए भी यह कहा जा सकता है कि ये पत्र-पत्रिकाएँ हिंदी की विकास यात्रा की शुरुआत की थीं जिसे आगे बढ़ाया भारतेंदुकालीन प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं ने। 1868 से लेकर 1892 तक प्रकाशित होने वाली अनेक पत्र-पत्रिकाओं ने मानो हिंदी विकास के पंख लगा दिए हों। इस कालखंड में उत्तर प्रदेश के अनेक स्थानों से हिंदी की अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन इस बात का संकेत कर रहा था कि यदि प्रथम युग में हिंदी की शुरुआत कलकत्ता से हुई तो उसके विकास में पंख लगाने का काम उत्तर प्रदेश से प्रकाशित होने वाली पत्र-पत्रिकाओं ने किया। इनमें काशी से 1868 में प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका 'कवि वचन सुधा' का महत्त्वपूर्ण स्थान है जिसका संपादन भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने किया था। 1871 में बिहार प्रांत से पंडित केशव राय भट्ट के संपादकत्व में प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'बिहार बंधु' का हिंदी विकास में उल्लेखनीय योगदान माना जा सकता है। 1873 में बनारस से भारतेंदु बाबू के

संपादकत्व में हरिश्चन्द्र मैगजीन का प्रकाशन हुआ जो कालांतर में 'हरिश्चन्द्र चंद्रिका' के रूप में प्रकाशित हुई। बनारस से ही भारतेंदु बाबू के संपादकत्व में 'बालबोधिनी' पत्रिका का भी हिंदी विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। अलीगढ़ से 'काशी पत्रिका' और 'भारत बंधु पत्रिका' का प्रकाशन लगभग इसी समय प्रारंभ हुआ। बालकृष्ण भट्ट के संपादकत्व मे प्रयाग से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'हिंदी प्रदीप', बद्रीनारायण चौधरी के संपादकत्व मे 'आनंद कादंबिनी', प्रताप नारायण मिश्र के संपादकत्व में 'ब्राह्मण', पंडित राधाचरण गोस्वामी की 'भारतेंदु', रामकृष्ण वर्मा की 'भारत जीवन' तथा देवकी नंदन त्रिपाठी के प्रयाग समाचार आदि का भी योगदान कम नहीं रहा। इसी युग में 'हिंदुस्तान दैनिक' का प्रकाशन भी हुआ। इस पत्र को राजाराम पाल सिंह ने इंग्लैंड से अंग्रेजी में शुरू किया किंतु कालांतर में यह पंडित मदन मोहन मालवीय के संपादकत्व मे लखनऊ से हिंदी में प्रकाशित हुआ। इस संदर्भ में एक रोचक प्रसंग है- जब राजा रामपाल सिंह ने पत्र के संपादन के लिए पंडित मदन मोहन मालवीय से अनुरोध किया तो उन्होंने एक शर्त रखी कि जब आप ड्रिंक किए हों तो ऑफिस में नहीं पधारेंगे और जब आप ड्रिक किए हों तो मुझे अपने पास नहीं बुलाएंगे। यदि ऐसा होता है तो वह इस पत्र के साथ उस दिन मेरा अंतिम दिन होगा। संयोग से लगभग दो वर्ष बाद एक दिन राजा रामपाल सिंह ने मालवीय जी को पत्र के संदर्भ में विचार-विमर्श हेतु अपने पास बुलाया। संयोग से वह ड्रिंक किए हुए थे। मालवीय जी ने तत्काल त्यागपत्र लिखा और वापस चले आए। उस दिन राजा रामपाल ने उन्हें लालच भी दिया, भय दिखाया और मजबूर भी किया किंतु मालवीयजी झुके नहीं, रुके नहीं तथा एक क्षण रुके बिना वहाँ से चल दिए। यह एक स्वाभिमानी हिंदी प्रेमी की दास्तान है।

द्विवेदी युग भी हिंदी के विकास की इस यात्रा को गतिशील करने में महत्त्वपूर्ण रहा है। इस युग में पत्र-पत्रिकाओं का केंद्र प्रायः काशी और प्रयाग था। इस युग की पहली साप्ताहिक पत्रिका 1893 में मिर्जापुर से बद्रीनारायण चौधरी के संपादकत्व में 'नागरी नीरद' का प्रकाशन हुआ। काशी से प्रकाशित होने वाली त्रैमासिक पत्रिका नागरी प्रचारिणी पत्रिका, उपन्यास मासिक पत्रिका, सरस्वती मासिक पत्रिका, सुदर्शन मासिक पत्रिका तथा हिंदू मासिक पत्रिका के प्रकाशन का हिंदी विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। इस युग के महत्त्वपूर्ण लेखक महावीर प्रसाद द्विवेदी 'सरस्वती' पत्रिका में बराबर लिखा करते थे और अपने लेखों के माध्यम से शुद्ध हिंदी में लिखने के लिए लोगों को प्रेरित भी करते थे तथा अशुद्ध लिखने वालों की खबर भी लेते थे इसलिए हिंदी विकास यात्रा को गतिशील करने में 'सरस्वती' पत्रिका के योगदान को कभी विस्मृत नहीं किया जा सकता। इसी कालखंड में जयपुर से प्रकाशित होने वाली गुलेरी जी की 'समालोचना' मासिक का तथा प्रयाग से प्रकाशित होने वाले मदन मोहन मालवीय के 'अभ्युदय' साप्ताहिक का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। कृष्णकांत मालवीय प्रयाग से मर्यादा मासिक पत्रिका निकालकर हिंदी के विकास को आगे बढ़ा रहे थे। इसी युग में प्रताप, प्रज्ञा, पाटलिपुत्र, शारदा आदि पत्र भी हिंदी के योगदानों को जनमानस में फैला रहे थे। छायावादी युग में प्रकाशित होने वाली पत्रिकाएँ जहाँ हिंदी के विकास की कहानी कह रही थी वही स्वतंत्रता आंदोलन की चिंगारी भी बुलंद कर रही थी इसलिए इस कालखंड की पत्रिकाओं का महत्त्व स्वतः सिद्ध होता है। स्वतंत्रता आंदोलन को आंधी-तूफान की तरह गति देने में अहमदाबाद

से प्रकाशित होने वाले गांधी का नवजीवन, पटना से प्रकाशित होने वाले राजेंद्र प्रसाद का देश, कोलकाता से प्रकाशित होने वाले महादेव प्रसाद सेठ का मतवाला, जबलपुर से प्रकाशित होने वाले माखनलाल चतुर्वेदी की कर्मवीर, बनारस से प्रकाशित होने वाले शिवपूजन सहाय के जागरण के योगदान का चित्रण शब्दों से संभव नहीं है। इसी युग में प्रयाग से प्रकाशित होने वाले महादेवी वर्मा का चांद, लखनऊ से दुलारे लाल भार्गव की माधुरी ,गोरखपुर के हनुमान प्रसाद पोद्दार का कल्याण, कानपुर से मोहन प्यारे शुक्ला का सुकवि मासिक, बनारस से प्रेमचंद का हंस, प्रयाग के क्षितिज मोहन की माया आदि हिंदी की महत्त्वपूर्ण पत्र-पत्रिकाएँ थीं जिनके माध्यम से हिंदी की विकास यात्रा सुगम हुई। छायावादोत्तर युग में भी अधिकांश ऐसी पत्रिकाओं का प्रकाशन देखा जाता है जिनका आजादी के आंदोलन में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा जिनमें नंददुलारे वाजपेई का भारत, यशपाल का विप्लव, अज्ञेय का प्रतीक, मुक्तिबोध का नया खून आदि रहे। इसी युग में बाबू गुलाब राय ने साहित्य संदेश, धर्मवीर भारती ने धर्मयुग, शिवदान सिंह चौहान ने आलोचना, जगदीश गुप्त ने नई कविता, कन्हैयालाल ने ज्ञानोदय, रामविलास शर्मा ने समालोचना, ज्ञान रंजन ने पहल, रतनलाल ने सारिका, रघुवीर सहाय ने दिनमान, राजेंद्र यादव ने हंस, हरिनारायण ने कथादेश, वीरेंद्र कालिया ने नया ज्ञानोदय का प्रकाशन हिंदी की विधाओं को सशक्त बनाने के लिए किया। इन पत्रिकाओं के माध्यम से हिंदी की विभिन्न विधाएँ - कहानी, लघुकथा, बाल कहानी निबंध, नाटक एकांकी, संस्मरण, आलोचना, समालोचना, समीक्षा, नई कविता आदि अत्यंत सशक्त हुई। वर्तमान समय में हिंदी को भाल की बिंदी बनाने मे हंस मासिक, पाखी मासिक, बया मासिक, पहल, लमही, आलोचना, नया ज्ञानोदय, बहुवचन, समालोचना, परी कथा, समकालीन भारतीय साहित्य, गवेषणा, अक्षर वार्ता नयापथ, साखी, तद्भव, साक्षात्कार, मधुमती आदि पत्रिकाएँ एवं अनगिनत दैनिक पत्र अहर्निश प्रयासरत हैं। दुर्भाग्य से जो पारिवारिक हिंदी पत्रिकाएँ संयुक्त परिवार को एकजुट करने, परिवार के विखंडन को रोकने तथा परिवार में सामंजस्य स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रही थी, आज वे पत्रिकाएँ काल के कराल गाल में समा गई जिनका मूल कारण उनका अव्यावसायिक होना था।

जब राजा रामपाल सिंह ने पत्र के संपादन के लिए पंडित मदन मोहन मालवीय से अनुरोध किया तो उन्होंने एक शर्त रखी कि जब आप ड्रिंक किए हों तो ऑफिस में नहीं पधारेंगे और जब आप ड्रिक किए हों तो मुझे अपने पास नहीं बुलाएंगे। यदि ऐसा होता है तो वह इस पत्र के साथ उस दिन मेरा अंतिम दिन होगा। संयोग से लगभग दो वर्ष बाद एक दिन राजा रामपाल सिंह ने मालवीय जी को पत्र के संदर्भ में विचार-विमर्श हेतु अपने पास बुलाया। संयोग से वह ड्रिंक किए हुए थे। मालवीय जी ने तत्काल त्यागपत्र लिखा और वापस चले आए। उस दिन राजा रामपाल ने उन्हें लालच भी दिया, भय दिखाया और मजबूर भी किया किंतु मालवीयजी झुके नहीं, रुके नहीं तथा एक क्षण रुके बिना वहाँ से चल दिए। यह एक स्वाभिमानी हिंदी प्रेमी की दास्तान है।

उपभोक्तावादी बाजार में जिनकी अधिक माँग होती है वही वहाँ ठहर पाती हैं, वही स्थान बना पाती हैं। किन्तु दुर्भाग्य से हमारी महत्त्वपूर्ण पत्रिकाएँ - धर्मयुग, साप्ताहिक हिंदुस्तान, सारिका तथा दिनमान किसी जमाने में जनता के आकर्षण का केंद्र होती थी, धीरे-धीरे अनाकर्षण के कारण अस्त हो गई और उनके साथ मानो पारिवारिक संस्कार भी अस्त हो गए। टेलीविजन के विभिन्न चैनलों से परोसी जाने वाली फूहड़ सामग्री ने जहाँ इन पत्रिकाओं के ठहराव पर ब्रेक लगाया वहीं मोबाइल-संस्कृति ने इनको अस्ताचल में भेजने हेतु कोई कोर कसर नहीं रखी। इतना सब होते हुए भी प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए प्रकाशित होने वाली हिंदी माध्यम की पत्रिकाएँ -प्रतियोगिता दर्पण, प्रतियोगिता आनंद, प्रतियोगिता दृष्टि, प्रतियोगिता संदेश, प्रगति मंजूषा, प्रतियोगिता दिग्दर्शिका आदि अधिक संख्या में पढ़ी जा रही हैं तथा साथ ही साथ हिंदी प्रेमी पाठक आज भी हंस, समकालीन भारतीय साहित्य, गवेषणा, साक्षात्कार, नवनीत, कादंबिनी और मधुमती का इंतजार करता हुआ देखा जाता है। विकट परिस्थितियों में भी हिंदी प्रेमी निःसंदेह हिंदी की चेतना को विस्तारित करता रहेगा और हिंदी की समय-समय पर प्रकाशित होने वाली ये पत्र-पत्रिकाएँ इस विस्तार में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देती रहेंगी। भारतेंदु पूर्व युग, भारतेंदु युग, द्विवेदी युग, छायावादी युग, छायावादोत्तर युग और वर्तमान युग के किसी भी कालखंड में हिंदी की विकास यात्रा कभी नहीं रुकी, आगे बढ़ती रही है और सदैव आगे बढ़ती रहेगी, और हिंदी चेतना की जागृति होती रहेगी। ऐसा विश्वास है। ❑

तकनीक की भाषा बनकर सिरमौर बने

प्रो. नरेन्द्र मिश्र

आचार्य हिंदी संकाय,
मानविकी विद्यापीठ,
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त
विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

हिंदी अपने सामर्थ्य और आत्मसात् करने की भाषा के कारण आज विश्व भाषा बन चुकी है। हिंदी को विज्ञान, तकनीक, विधि समेत तमाम अत्याधुनिक अनुशासनों की भाषा बनाने का अवसर आ गया है। यह अवसर हमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 ने प्रदान किया है। बाजार और संचार की भाषा तो हिंदी बन चुकी है लेकिन न्यायालय की भाषा बनना अभी शेष है। जनसंचार की भाषा के रूप में हिंदी के माध्यम से हम संपूर्ण विश्व से संवाद स्थापित करते हैं। हमारा परिवार चाहे भारत में हो या चाहे हमारे प्रवासी भाई-बहन हों सभी से हिंदी में बात कर हम आत्मीयता का अनुभव करते हैं।

हिंदी हमारी मातृभाषा है, राजभाषा है, संपर्क भाषा है, अनौपचारिक रूप से हमारी राष्ट्रभाषा और विश्वभाषा है। हिंदी का परिवार अत्यंत समृद्ध है। भारतीय संस्कृति की तरह हिंदी में भी अनेकता में एकता का संदेश निहित है। इतनी विविधताओं के बावजूद हिंदी हमें सभी भारतीयों से जोड़ती है, ऊष्मा प्रदान करती है और हम उदारता एवं भाईचारे का अनुभव करते हैं। अलग-अलग बोलियाँ, अलग-अलग संस्कार, भिन्न-भिन्न वेशभूषा और भिन्न-भिन्न परिवेश इसके बावजूद हम सभी एक हैं। सभी सुख-दु:ख साथ-साथ बाँटते हैं। हमारा देश उत्सव धर्मी देश हैं, यहाँ अनेक प्रकार के रीति-रिवाजों एवं धर्मों के लोग अपनी-अपनी आस्थाओं एवं विश्वासों के साथ तीज-त्यौहार मनाते हैं और हम सभी इन पर्वों को विशेष उत्सव के साथ गाते और सुनते हैं। हिंदी दिवस भी एक उत्सव है जो हमें एकता के सूत्र से जोड़ता है। एकता का बंधन हमें सुखद एहसास दिलाता है। हम सभी हिंदुस्तानी हैं, हम साथ-साथ देश की खुशहाली के मंगल गीत गाते हैं। यही एकता हमें एक से अनेक बनाती है, यही विविधता भारत की खूबसूरती है।

विश्व का कोई कोना ऐसा नहीं है जहाँ हमारा हिंदी परिवार न हो। हिंदी के प्रति उत्कट प्रेम हमें संपूर्ण विश्व से जोड़ता है। हमारी संस्कृति वसुधैव कुटुंबकम् की संस्कृति है। संपूर्ण वसुधा को ही हम अपना कुटुंब मानते हैं और उसकी उन्नति एवं समृद्धि की निरंतर कामना करते रहते हैं। तभी तो भारतीय एवं प्रवासी जगत हिंदी में एक ही तरह की कामना करता है। मॉरीशस के वरिष्ठ कवि मुनीश्वरलाल चिंतामणि की 'मेरी हिंदी भाषा' शीर्षक कविता में संपूर्ण भारतीय संस्कृति की अस्मिता समाहित है। वे

लिखते हैं ''उस आदमी से जाकर कहो कि/ मेरी हिंदी भाषा/एक ऐसी खूबसूरत चीज़ है/ जिसने मेरी संस्कृति को/ अब भी बचाए रखा है/मेरी हिंदी भाषा/एक ऐसी

खूबसूरत चीज है जिसने मेरी पहचान को/अभी भी बनाए रखा है/उस आदमी से जाकर कहो कि/मेरी हिंदी भाषा की महानता का/वह अभिनंदन करे। मेरे पूर्वजों की त्याग तपस्या का/बार-बार स्मरण करे/वह जान ले कि/उन पूर्वजों के प्रति मेरी श्रद्धा अपार है। उनकी भाषा की रीढ़ को,/टूटने नहीं दूँगा मैं। हिंदी जो गई तो मैं समझूँगा/संस्कृति भी गई/ हिंदी जो गई तो मैं समझूँगा/अपनी पहचान भी गई।''

ऋग्वेद का अमर संदेश है - आ नो भद्रां, कृतवो धंतु विश्वत: अर्थात् प्रत्येक दिशा से शुभ एवं सुंदर विचार हमें प्राप्त हों। कहीं से भी अच्छे विचार प्राप्त हों उन्हें हमें ग्रहण करना चाहिए। विचार के लिए भौगोलिक दूरियाँ मायने नहीं रखती हैं इसलिए कविवर रवीन्द्र नाथ टैगोर ने भारतीय भाषाओं को नदियाँ कहकर संबोधित किया था तदनुसार भारतीय भाषाएँ नदियाँ हैं और हिंदी भाषा महानदी। हिंदी समाजाश्रय की भाषा रही है अतएव समाज में प्रसारित हो रहे इसके स्वरूप पर चिन्तन आवश्यक है। समाज में इसके सही स्वरूप का रक्षण ही इसके उत्थान का कारक होगा। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मानना है - ''कोई भी भाषा जितने अधिक व्यापारों से मनुष्य का साथ देगी उसके विकास और प्रचार की उतनी ही अधिक संभावना होगी।'' विश्व के अनेक देशों में अब हिंदी पाठशालाएँ खुल रही हैं। मारिशस में महात्मा गांधी संस्थान, टैगोर संस्थान, विश्व हिंदी सचिवालय आदि संस्थाएँ कार्यरत हैं। विश्व अब यह जान गया है कि भारतीय चिंतन एवं दर्शन का मूल स्रोत 'हिंदी' है । भारत देश की आत्मा को हिंदी के माध्यम से ही जाना-समझा जा सकता है। मॉरीशस के हिंदी कवि अभिमन्यु अनत की कविता यहाँ दृष्टव्य है

''मेरे दोस्त!/उस भाषा में मेरे लिए/शुभकामना मत कर/जिसकी चुभती ध्वनि मुझे/उस गुलामी के दिनों की याद दे जाती है!/चाबुक की बौछारों का आदेश/निकलता था जिस भाषा में/उस भाषा को मेरी भाषा मत कह/मेरे दोस्त!''

हिंदी में सिर्फ भारत ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व बिम्बित होता है। इसमें वैश्विक चेतना का पूर्णत: संस्पर्श है तथा सार्वभौम चिन्तन का स्वर मुखरित है। आज विश्वमानव को सत्य, प्रेम, शांति, अहिंसा, दया, क्षमा, उदारता, सहिष्णुता, संतोष, सदाचार आदि मानव मूल्यों की अत्यधिक आवश्यकता है। किसी देशकाल और परिस्थिति में जनसाधारण की उदात्त मान्यताएँ ही उस देश की धरोहर होती हैं। जयशंकर प्रसाद के काव्य में मानव को दूसरों के सुख में ही सुखी रहने का संदेश दिया गया है जो मानव जीवन के लिए अत्यंत श्रेयस्कर है -

औरों को हँसते देखो मनु,
हँसो और सुख पाओ।
अपने सुख को विस्तृत कर लो,
जग को सुखी बनाओ।।

हमारा साहित्य सारे विश्व को एक परिवार मानने की भावना से अनुप्राणित है। यह भारतीय संस्कृति और सनातन परंपरा की विशिष्टता है कि वह संपूर्ण विश्व को अपना परिवार मानता है -

अयं निज: परोवेति
गणना लघुचेतसाम्।
उदार चरितानां तु
वसुधैव कुटुम्बकम्।।

हमारी संस्कृति एवं साहित्य में एक ही भावना है कि विश्व के सभी प्राणी सुखी हों सभी नीरोग हों सभी का कल्याण हो, कोई भी दु:खी न हों -

हिंदी भाषा की बोलियों ने इसे जहाँ एक तरफ समृद्ध किया, ताकत दी, वहीं दूसरी तरफ भारत की भाषाई एकता को भी मजबूत किया। अधिकांश भारत की मातृ भाषा और प्रथम भाषा होने से हिंदी सम्प्रेषणीय है, द्वितीय भाषा या इतर भाषा के द्वारा सम्प्रेषण एक चुनौतीपूर्ण एवं लम्बी प्रक्रिया है। इसीलिए 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति' में मातृ भाषा में ही शिक्षण पर बल दिया गया है, क्योंकि मातृ भाषा में बालमन पर बिम्ब निर्माण की प्रक्रिया सरल एवं सहज होगी। हिंदी यह कार्य सरलता से करती है। क्योंकि संस्कृत भाषा की धरोहर को तत्सम शब्दावली, सुभाषित, मुहावरे आदि के माध्यम से हिंदी बचाये हुए है।

ॐ सर्वे भवन्तु सुखिनः
सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु
मा कश्चिद्दुःखभाग्भवेत्।।

डॉ. विद्यानिवास मिश्र ने हिंदी भाषा को एक मूल्य माना है। उनके अनुसार जिन मूल्यों की प्रतिष्ठा हिंदी ने की थी, वे सार्वभौम थे। इन्हीं सांस्कृतिक मूल्यों के लिए विदेशों में रह रहे हिंदी भाषी प्राणपण से संकल्पित हैं। मारिशस की संसद ने सन् 2001 में अधिनियम बनाकर 'रामायण सेंटर' की स्थापना की। रामायण सेंटर के अध्यक्ष राजेन्द्र अरुण ने लिखा हैं कि मारिशस, गयाना, फीजी, सूरीनाम, त्रिनिडाड और दक्षिण अफ्रीका जैसे देशों में 'रामायण' के द्वारा हिन्दू धर्म की जयपताका फहराने वाले अपढ़, असहाय प्रवासी भारतीय मजदूर ही थे। मारिशस तो विश्व में रामायण का देश माना जाता है। यहाँ प्रतिदिन घरों, मंदिरों और सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाओं के केन्द्रों में रामायण का पाठ चलता रहता है। सभी गाँवों-नगरों में रामायण मंडलियाँ बनी हुई हैं जो नियमित रूप से घर-घर जाकर रामायण का सत्संग करती हैं।

न्यूयार्क की कवयित्री पूर्णिमा देसाई का हिंदी के प्रति सम्मान का भाव देखते ही बनता है। वे लिखती हैं – ''मैं हिंदी हूँ/भारत माँ की बिन्दी हूँ/मैं भारत की राष्ट्रभाषा हिंदी हूँ।'' मारीशस के प्रेमचंद कहे जाने वाले सुविख्यात रचनाकार अभिमन्यु अनत ने हिंदी भाषा को अपनी आत्मा से लगाये हुए हैं। वे सब कुछ लुटा सकते हैं किंतु हिंदी भाषा पर अपने अधिकार को नहीं छोड़ सकते। उनकी एक कविता का अंश है –

''मेरा सब कुछ लूट लो/मेरे घर में आग लगवा दो/मुझे सूली पर चढ़वा दो/पर तुम्हें छीनने नहीं दूंगा/अपनी हिंदी भाषा।''

मुझे ज्ञात नहीं है कि आजादी के बाद मेरे देश में किसी हिंदी लेखक ने हिंदी भाषा के प्रति ऐसी निष्ठा, ऐसी दृढ़ता तथा ऐसा संकल्प प्रकट किया हो। विदेशों में रह रहे भारतीयों को भारत देश पर गर्व और गौरव है। वे चाहते हैं कि यह देश सर्वशक्तिमान बने। स्वयं की तथा अपने पूर्वजों की याद उन्हें हमेशा सताती रहती है। भारतीय संस्कृति से उन्हें अगाध प्रेम है। उनके लेखन में भारत और भारतीयता यत्र-तत्र सर्वत्र मौजूद है। समृद्ध लेखन के बाद भी यथोचित सम्मान न मिलने से वे दुखी भी हैं। उनकी हार्दिक अभिलाषा है कि उनके लेखन को खाँचों में न बाँटकर मुख्य धारा मे शामिल किया जाए। उनके लेखन को प्रवासी साहित्य न कहकर बल्कि मुख्य साहित्य ही कहा जाए।

माटी मेरे देश की चंदन,
माथे पे लगाकर देखो।
याद में बहती गंगा-जमुना,
आँखों से नहाकर देखो।।
(अमेरिकन कवि श्रीरामबाबू गौतम)

19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में लार्ड मैकाले ने कहा था – ''हमें व्यक्तियों का एक ऐसा वर्ग बनाना चाहिए जो रक्त तथा रंग से भारतीय हों; परन्तु स्वभाव, नैतिकता और बुद्धि से अंग्रेज हो।'' राष्ट्रीय शिक्षा नीति में राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी को अवस्थित करने का उल्लेख न होने से हिंदी के प्रेमी अपने आपको ठगा महसूस करते हैं। भारत भारतीकार हमें चेताते हैं – ''लेकर पिछला गौरव ज्ञान, मत भूलो आगे का ध्यान। उस अतीत का क्या सम्मान, यदि भविष्य न हो महान।।'' यानी हिंदी को विश्व का सिरमौर बनाने के लिए हमें बहुत कुछ करना होगा। यह तभी होगा जब देवनागरी लिपि भारतीय लिपि के रूप में अंगीकार हो तथा राष्ट्रभाषा हिंदी बने। राष्ट्रीय शिक्षा नीति इसके लिए एक प्रस्थान बिंदु के रूप में कार्य करेगी लेकिन उसका क्रियान्वयन कर हिंदी को तकनीकी भाषा के रूप में सक्षम बनाने के लिए हम सभी हिंदी प्रेमियों को प्राणपण से कार्य करना होगा। सितंबर माह में हम हिंदी दिवस, पखवाड़ा और मास मनाते हैं हमारी परिकल्पना है कि हर दिन हम हिंदी दिवस मनाएँ। जिस तरह इजराइल की राष्ट्रभाषा हिब्रू बनी और तकनीकी रूप से सक्षम बनी, तुर्की की राष्ट्रभाषा कमालपाशा के दृढ़संकल्पों के कारण तुर्की बनी उसी तरह हम सभी दृढ़संकल्पित हों और हिंदी को राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन करें। इसी आशा और विश्वास के साथ आप सभी हिंदी सेवियों को मैं अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ देता हूँ। ❑

भारत की सांस्कृतिक एकता और हिंदी

प्रो. प्रत्यूष दुबे

आचार्य, हिंदी विभाग,
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर
विश्वविद्यालय,
गोरखपुर (उ.प्र.)

'भारत' क्या है? सिर्फ एक भूखण्ड? कुछ राज्यों का समूह मात्र? या फिर कुछ और भी। हमारी सनातन परम्परा में इसे एक जीवंत सत्ता माना गया। अथर्ववेद के 12वें मण्डल में भूमिसूक्त में कहा गया है – 'माता भूमिः पुत्रोहं पृथिव्याः।' यह विचार पृथ्वी के प्रति हमारे संस्कार का द्योतक है। पुरातनकाल से ही हम भारत को एक जीवनमान राष्ट्र के रुप में स्वीकार करते हैं, जिसकी सीमाएँ समुद्र से उत्तर और हिमालय से दक्षिण क फैली हुई है और हम इसी की संतति हैं –

उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वर्ष तत् भारतं भारती यत्र संतति।।

हमारे संस्कारों में, हमारी आत्मा में बसी हुई भारत की संस्कृति भी चिरंतन है, और इस संस्कृति को एक स्वरूप प्रदान करती है, हमारी भाषा 'हिंदी'।

मानव सभ्यता के विकास क्रम में अग्नि एवं पहिए के आविष्कार के साथ ही साथ भाषा की भी अहम भूमिका है, मनुष्य ने अपनी अभिव्यक्ति के लिए भाषा और आगे चलकर लिपि का विकास किया। यूनेस्को की एक रिपोर्ट के अनुसार सन् 1900 में विश्व में लगभग 10000 भाषाएँ थी, जिनमें 100 वर्ष पश्चात् सन् 2000 में 6700 भाषाएँ ही जीवित रह पाईं। भारत वर्ष में भी लगभग 1650 मातृ भाषाएँ हैं किन्तु भूमण्डलीकरण एवं संचार क्रान्ति के इस युग में इनमें से भी कुछ के विलुप्त होने की सम्भावना बढ़ गई है। भाषाओं के दस विलोपन से संस्कृतियों के विलोपन की सम्भावना भी बलवती होती गई है। किन्तु हमारी संस्कृति अभी भी जीवन्त है तो इसके पीछे का महत्त्वपूर्ण कारक हमारी भाषा 'हिंदी' ही है। भारत वर्ष में लगभग 68 प्रतिशत लोग हिंदी बोल या समझ लेते हैं, वैश्विक समुदाय में भी अब हिंदी को बोलने एवं समझने

वालों की संख्या काफी है। आसेतु हिमालय सर्वाधिक राज्यों की मातृभाषा, प्रथम भाषा और सम्पर्क भाषा के रुप में स्वीकृत और प्रचलित भाषा हिंदी ही है, जो हमें एकता के सूत्र में पिरोती है। हिंदी भाषा की बोलियों ने इसे जहाँ एक तरफ समृद्ध किया, ताकत दी, वहीं दूसरी तरफ भारत की भाषाई एकता को भी मजबूत किया। अधिकांश भारत की मातृ भाषा और प्रथम भाषा होने से हिंदी सम्प्रेषणीय है, द्वितीय भाषा या इतर भाषा के द्वारा सम्प्रेषण एक चुनौतिपूर्ण एवं लम्बी प्रक्रिया है। इसीलिए 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति' में मातृ भाषा में ही शिक्षण पर बल दिया गया है, क्योंकि मातृ भाषा में बालमन पर बिम्ब निर्माण की प्रक्रिया सरल एवं सहज होगी। हिंदी यह कार्य सरलता से करती है। क्योंकि संस्कृत भाषा की धरोहर को तत्सम शब्दावली, सुभाषित, मुहावरे आदि के माध्यम से हिंदी बचाये हुए है। हिंदी जनभाषा, लोक भाषा के रूप में धीरे-धीरे विकसित होती है और विकास के अपने भ्रूणकाल से ही सांस्कृतिक धरोहरों को भी समेटती जाती है। 'भाषा और विमर्श' लेख में विनोद शाही इस बिन्दु पर विस्तार से चर्चा करते हुए लिखते हैं – ''जनभाषा के रूप में विकास करना आरम्भ करती हुई हिंदी 10वीं-11वीं सदी में जिन प्रसूति-संस्कारों को विरासत में पाती है – वे सत्ता या शक्ति केन्द्रों से बाहर रहकर, केवल प्रचलन और आपसी स्वीकृति के सहारे, एक तरह की आत्मा सत्ता को खोजने-पाने से जुड़े संस्कार हैं। हिंदी के इस प्रसूति कालीन लोकचित्त को सांस्कृतिक धरातल पर जो नई सृजनात्मक अभिव्यक्ति है उसे हम सरहपा, कण्हपा और गोरखनाथ की हिंदी में देख सकते हैं।'' हमारा चिन्तन '**रुपं रुपं प्रति रुपं बभ्व**' की अवधारणा पर केन्द्रित है।

अर्थात् प्रत्येक रुप उसी 'परम' का प्रतिरुप है, प्रत्येक प्राणि में परम सत्ता का स्वरुप है। हमारा लक्ष्य उसी परम सत्ता से मिलन है, अर्थात् मोक्ष/हिंदी के भ्रूणकाल में गोरखनाथ अपनी सहज योग साधना से लोकमन को उसी परम लक्ष्य की तरफ ले जाते हैं।

हिंदी का मध्यकाल भक्तिकालीन कवियों का काल रहा, जिसे हिंदी का स्वर्णयुग भी कहा गया, क्योंकि इन कवियों की कविताओं में सम्पूर्ण भारत की संस्कृति और आध्यात्मिक चेतना बोलती हुई दिखाई देती है, जो राष्ट्रीय एकता का प्रमुख सूत्र है। इन भक्तिकालीन कवियों ने भी जन भाषा को, लोक में स्वीकृत भाषा को अपने संवाद का माध्यम बनाया। कबीर जहाँ भारत के लगभग सभी हिंदी भाषी क्षेत्रों की बोलियों को अपनी बानी में स्थान देते हैं, तो तुलसी जैसा संस्कृत का प्रकाण्ड विद्वान लोक में प्रचलित अवधी को चुनता है। वह भारत की सांस्कृतिक एकता के महत्त्वपूर्ण आधार ग्रन्थ 'श्रीरामचरितमानस' की रचना करते समय लिखते हैं –

नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ।
स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा
भाषा निबन्धमतिमञ्जुलमातनोति।।

सामान्य जन के हित हेतु, स्वान्तः सुखाय के लिए, लोक स्वीकृत राम की कथा को लोक की भाषा में ही तुलसी रच कर भारत की सांस्कृतिक एकता को और सुदृढ़ करते हैं। 'रामराज्य' की परिकल्पना तत्कालीन समय की बड़ी आवश्यकता थी, जब –

खेती न किसान को भिखारी को न भीख
बलिबनिक को बनिज न चाकर को चाकरी।

मुगल साम्राज्य की ऐसी परिस्थिति में जब व्यक्ति समाज एवं राष्ट्र 'कहाँ जाई?, का करीं?' के प्रश्न से जूझता है तब हिंदी भाषा का एक कवि उसे 'रामराज्य' का विकल्प देता है। यह विकल्प भारतीय संस्कृति को प्रवाहमान बनाये रखता है। भारतीय संस्कृति का उदात्त रुप हमें भारतीय साहित्य में स्पष्टतः परिलक्षित होता है। 'संस्कृति' को परिभाषित करते हुए हृदयनारायण दीक्षित लिखते हैं – ''प्रकृति प्रसाद है, विकृति विषाद है, लेकिन संस्कृति महाप्रसाद है। संस्कृति का निर्माण अचानक नहीं होता। राष्ट्र के सभी अंगभूत घटक एक स्वर, एक लय, एक प्रति, एक छंद और एक रस में स्पंदित होकर अपनी संस्कृति गढ़ते हैं।

हमारी चेतना अपनी संस्कृति के निर्माण प्रक्रिया से पूर्णतः एकमेक है तभी हम 'धरती' में 'माँ' का स्वरूप देखते हैं और देश में 'राष्ट्र'। संस्कृत के पश्चात हिंदी भाषा इसी संस्कृति की वाहक बनती है। हमारी विचार सरणि अभेद को स्वीकार करती है। जब हमारा ऋषि कहता है 'अहं ब्रह्मास्मि' तो वह तत्क्षण दूसरे के लिए भी कहता है 'तत्वमसि'। प्रसाद कामायनी में उसी एक तत्त्व की बात करते हैं – 'एक तत्त्व की ही प्रधानता, कहो उसे जड़ या चेतन।' यह अभेदत्व ही हमें 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से भरता है तभी हम सबके कल्याण सबके सुख की कामना करते हैं। एक भारतीय माँ 'श्रद्धा' अपनी इसी परम्परा एवं संस्कार को अपनी अगली पीढ़ी (अपने पुत्र मानव) को हस्तान्तरित करते हुए कहती है 'सबकी समरसता का कर प्रचार, मेरे सुत सुन माँ की पुकार।'

हिंदी भाषा की बोलियों ने इसे जहाँ एक तरफ समृद्ध किया, ताकत दी, वहीं दूसरी तरफ भारत की भाषाई एकता को भी मजबूत किया। अधिकांश भारत की मातृ भाषा और प्रथम भाषा होने से हिंदी सम्प्रेषणीय है, द्वितीय भाषा या इतर भाषा के द्वारा सम्प्रेषण एक चुनौतीपूर्ण एवं लम्बी प्रक्रिया है। इसीलिए 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति' में मातृ भाषा में ही शिक्षण पर बल दिया गया है, क्योंकि मातृ भाषा में बालमन पर बिम्ब निर्माण की प्रक्रिया सरल एवं सहज होगी। हिंदी यह कार्य सरलता से करती है। क्योंकि संस्कृत भाषा की धरोहर को तत्सम शब्दावली, सुभाषित, मुहावरे आदि के माध्यम से हिंदी बचाये हुए है।

सबके हित, सुख, कल्याण, मंगल, समन्वय की कामना भारतीय दर्शन एवं संस्कृति के मूल में है। यह भावना ही हमें सांस्कृतिक एकता के सूत्र में पिरोती है। भारत की इस सांस्कृतिक विरासत को सहेजने और आगे बढ़ाने में हिंदी भाषा का अमूल्य योगदान है। हिंदी लोक जीवन और लोक संस्कृति को अभिव्यक्ति देने वाली भाषा है। इसकी लोकपक्षधरता की गूंज सम्पूर्ण हिंदी साहित्य में सुनायी पड़ती है।

हिंदी ने स्वतंत्रता के पश्चात् संविधान में राजभाषा का दर्जा प्राप्त किया। राजभाषा के रुप में यह अनेक राज्यों की प्रशासनिक एवं कार्यालयी भाषा के रुप में प्रचलित हुई। सरकारी कार्यालयों में प्रयोग से इसकी पारिभाषिक शब्दावली भी और विकसित हुई। दक्षिण भारत के कुछ राज्यों में निहित राजनैतिक स्वार्थों ने हिंदी विरोध आन्दोलन चलाकर देश में हिंदी के महत्त्व को कम करने की कोशिश की, किन्तु उन्हीं राज्यों में स्थित बड़े-बड़े मंदिरों में आने वाले श्रद्धालुओं के साथ व्यापारिक एवं वाणिज्यिक कारणों से हिंदी 'सम्पर्क भाषा' के रुप में अपना विशेष महत्त्व बनाए हुए है।

हिंदी भाषा का अंकन करने वाली देवनागरी लिपि भारत की सर्वाधिक वैज्ञानिक और स्वीकृत लिपि है, जिसमें भारत की अनेक हिंदीतर भाषाएँ भी लिखी जाती हैं, जैसे - मराठी, गुजराती, नेपाली आदि। अतः इन भाषा-भाषियों को हिंदी पढ़ने और समझने में भी सुविधा होती है।

भारत की सांस्कृतिक विरासत को संजोने में हिंदी भाषा की महती भूमिका है। अपनी लिपि, साहित्य एवं बोलियों के साथ हिंदी सम्पूर्ण भारत को एकता के सूत्र में बाँध कर भारत को सांस्कृतिक शक्ति प्रदान करती है। ❑

हिंदी को मजबूत बनाने के लिए हिंदी भाषा की उपभाषाओं की बोलियों को सुरक्षित-संरक्षित करते हुए उसे पुष्पित-पल्लवित करने का सतत प्रयास करना चाहिए। बोलियों की शब्दावली, बोलियों के लोक साहित्य, शिष्ट साहित्य के अतिरिक्त उसकी वाचिक एवं भाषिक परम्परा को संवर्द्धित करना नितांत आवश्यक हो गया है। हिंदी की उपरिलिखित बोलियों के उन्नयन एवं प्रचलन के लिए देश की संस्थाएँ एवं विश्वविद्यालय अग्रसर होकर कार्य करने के लिए उत्सुक नहीं दिखाई देती हैं।

हिंदी और उसकी बोलियों का यथार्थ

रीना मिश्रा 'पल्ली'
शिक्षा विभाग,
उ. प्र.राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज (राज.)

भारत ही नहीं, अपितु विश्वक्षितिज पर हिंदी भाषा शनैः-शनैः सर्वोच्च शिखर की ओर अग्रसर हो रही है। वर्तमान में संयुक्त राष्ट्र संघ में प्राप्त विश्वभाषा का स्थान हिंदी को नहीं दिया गया है, जबकि विश्व में जनसंख्या की दृष्टि से विश्व की प्रथम भाषा मंदारिन (चीनी) को मान्यता दी जाती रही है। धीरे-धीरे चीनी, अंग्रेजी की शीर्षस्थ भागीदारी का मिथक टूट रहा है और विश्वभाषा बोली में हिंदी-चीनी की तुलना से ज्ञात होता है कि विभिन्न कुल भौगोलिक क्षेत्रों-पश्चिम एशियाई देश, अफ्रीकी देश, केन्द्रीय एवं दक्षिणी अमेरिकी क्षेत्र, दक्षिण पूर्व एशिया, यूरोपियन देश, पूर्वी एशिया एवं प्रशांत क्षेत्र, अमेरिकी देश, अफगानिस्तान, केन्द्रीय-पश्चिमी एशिया, दक्षिण-एशियाई क्षेत्र, भारत में बसे हुए शरणार्थी के अतिरिक्त अन्य राष्ट्रों में 500 से कम भाषा जानने वालों की कुल जनसंख्या लगभग 6774000000 में से चीनी जानने वालों की संख्या 900670000 की अपेक्षा 1270000000 लोग हिंदी जानने वाले हैं। इस प्रकार से देखा जाए तो हिंदी ने वर्तमान समय में सर्वाधिक जानने वाली भाषा के रूप में सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर ली है।

हिंदी के विषय में सामान्यतः इन तथ्यात्मक बिंदुओं को देखने से प्रतीत होता है कि विश्व में संस्कृत की अपेक्षा न तो कोई अन्य समर्थ भाषा है, जिसकी हिंदी से तुलना हो सके। हिंदी भाषा के एक दर्जन रूपों में भारतीय प्रमुख रूप-हिंदवी, रेख्ता, दकनी, देहली, गूजरी, नागपुरी, ग्वालियरी, कौरवी, खड़ीबोली है जबकि देश-देशांतर में प्रचलित हिंदी के रूप-मानकीकृत खड़ीबोली, जनपदीय साहित्यिक विशेषताएँ, दकनी, हिंदुस्तानी, फिजियन, हिंदी, सरनामी, त्रिनी, क्रियोल, ताजुबेकी, नेपाली उल्लेखनीय हैं। वर्तमान हिंदी भाषा में डेढ़ दर्जन साहित्यिक विभाषाएँ भी मौजूद हैं तथा हिंदी की कुल भाषिक रूप सत्तानबे तक पहुँच चुकी है। हिंदी से संबंधित कुल अपनी पचास बोलियाँ तथा तीन सौ पच्चीस मातृभाषाएँ भी हैं। हिंदी की गृहीत एवं सृजित उपसर्गों की संख्या

लगभग तैंतालीस और परसर्गों की संख्या एक सौ तीस है, किंतु हिंदी की सभी धातुओं की अनुमानित संख्या छः सौ है जबकि अनुरणन के आधार पर हिंदी की धातुओं की संख्या चार सौ के लगभग है।

मानकीकरण की दृष्टि से हिंदी वर्णमाला की देवनागरी लिपि में अंग्रेजी के वर्णों से दुगुने की संख्या में बावन वर्ण मान्य हैं। विश्व की लगभग तीन हजार भाषाओं (2786) को अट्ठारह विश्वभाषा परिवार में वर्गीकृत करने पर भारत-यूरोपीय परिवार की आर्यभाषा वर्ग में सम्मिलित आधुनिक भाषा हिंदी मानी गई है। भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित की गई भाषाओं में असमिया, उड़िया, उर्दू, कन्नड़, कश्मीरी, गुजराती, तमिल, तेलुगू, पंजाबी, बंगला, मराठी, मलयालम, संस्कृत, सिंधी, हिंदी, नेपाली, मणिपुरी, कोंकणी, मैथिली, संथाली, डोगरी, बोडो उल्लेखनीय हैं।

हिंदी भाषा को उत्तरोत्तर गतिमान देखकर विदेशी शक्तियाँ, विदेशी कम्पनियाँ, विदेशी भाषा-प्रेमी के अतिरिक्त हिंदी-विरोधी भारतीय व्यक्तियों द्वारा इसे निरन्तर हानि पहुँचाने का भी सतत उपक्रम किया जाता रहा है। भाषा वैज्ञानिकों के मतानुसार हिंदी की पाँच उपभाषाएँ हैं जिनमें अपभ्रंश के पाँच रूपों से विकसित होकर पश्चिमी हिंदी, पूर्वी हिंदी, राजस्थानी हिंदी, पहाड़ी हिंदी और बिहारी हिंदी की पाँच उपभाषाएँ हैं। इन उपभाषाओं की बोलियाँ- खड़ीबोली (कौरवी), ब्रजभाषा, बुंदेली, कन्नौजी, हरियाणवी (बांगरू), अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी, मारवाड़ी, जयपुरी, मेवाती, मालवी, गढ़वाली, कुंमायूनी, मगही, मैथिली, भोजपुरी हैं। परन्तु इन बोलियों की समष्टि रूप में हिंदी समृद्ध होती जा रही है, जबकि बिहारीभाषा की मैथिली को आठवीं अनुसूची में सम्मिलित कर दिया गया है और भोजपुरी को सम्मिलित कराए जाने का संघर्ष जारी है, किंतु ऐसी भयावह स्थिति उत्पन्न करने वाले भाषा-विरोधी, तथाकथित राजनेता, स्वार्थी-साहित्यकार हमारी हिंदी की शक्ति को कमजोर करने में तुले हैं।

हिंदी को मजबूत बनाने के लिए हिंदी भाषा की उपभाषाओं की बोलियों को सुरक्षित-संरक्षित करते हुए उसे पुष्पित-पल्लवित करने का सतत प्रयास करना चाहिए। बोलियों की शब्दावली, बोलियों के लोक साहित्य, शिष्ट साहित्य के अतिरिक्त उसकी वाचिक एवं भाषिक परम्परा को संवर्द्धित करना नितांत आवश्यक हो गया है। हिंदी की उपरिलिखित बोलियों के उन्नयन एवं प्रचलन के लिए देश की संस्थाएँ एवं विश्वविद्यालय अग्रसर होकर कार्य करने के लिए उत्सुक नहीं दिखाई देती हैं। परन्तु अब धीरे-धीरे अनेक विश्वविद्यालय इस दृष्टिकोण से हिंदी भाषा के माध्यम से सभी ज्ञान की शाखाओं की पढ़ाई हिंदी माध्यम से कराने का कार्य कर रहा है। 2014 में केंद्र सरकार की विभिन्न योजनाओं से भारतीय भाषाओं के संबर्धन से हिंदी जैसी भाषाओं को अधिक महत्ता मिल रही है। प्रधानमंत्री जी के मन की बात हो या मंच से उनके भाषण हो, दोनों हिंदी में होने से आज विदेशी भी हिंदी की ओर आकर्षित हो रहे हैं। हिंदी अपनी शासकीय शक्तियों से भी मजबूत हो रही है।

भारत के सभी विश्वविद्यालयों में भारतीय भाषाओं एवं हिंदी के साथ उसकी बोलियों के उन्नयन-संवर्द्धन की दृष्टि से भाषा-बोली अध्ययन केन्द्र की स्थापना करके वाचिक-भाषिक और साहित्यिक परम्परा को गतिमान बनाते हुए उनकी विभिन्न बोलियों पर केन्द्रित शोध एवं कार्यशाला सतत् संचालित किए जाने की आवश्यकता है। ऐसे स्थापित-केन्द्र के माध्यम से न केवल भारतीय भाषाओं एवं हिंदी की बोलियों का उत्तरोत्तर विकास होगा बल्कि महत्त्व भी बढेगा; साथ ही अन्य भारतीय भाषाओं पर परस्पर शोध अनुसंधान के अवसर भी बढ़ेंगे। ऐसे केन्द्रों के खुल जाने से हिंदी पर हो रहे समस्त आघातों, समस्याओं से निदान होगा, साथ ही बोलियों के क्षरण को रोकते हुए बोलियों के विकास के लिए अध्ययन-अनुसंधान के अवसरों को भी बढ़ावा मिलेगा, जिससे भाषा और उसकी बोलियों को संबल मिलेगा। ❑